चन्दामामा
नवम्बर १९७३
९०
P

Photo by: K. S. PALANI

राम और श्याम पॉपिन्स चोर को पकड़ते हैं
रात अँधेरी सुनसान, नींद में खोये राम-श्याम
चोर आया घर में, फँसे दोनों मुसीबत में
चोर ने न चाहा धन, पॉपिन्स पर था उसका मन
कुत्ता भौंका...भौं भौं भौं, चोर चौंका...चौं चौं चौं
राम ने मचाया शोर, पकड़ा गया चोर
चखना होगा जेल का मज़ा, तेरे लिए यही सज़ा
राम-श्याम का बना काम, पॉपिन्स का मिला इनाम
रसीली प्यारी मज़ेदार
५ फलों के स्वाद—रास्पबेरी, अनानास, नींबू, नारंगी व मोसंबी.
हर पॅकेट में १३ गोलियां
PARLE POPPINS
पारले पॉपिन्स
फलों के स्वादवाली गोलियां
everest/508b/PP HN

हर साल लोकप्रियता दुगुनी होती जा रही है

लिपटन की रूबी डस्ट

RUBY
DUST

Superb Teas

SELECTED
FOR STRENGTH
AND FLAVOUR

LIPTON'S
TEA

लिपटन की रूबी डस्ट की क़द्र इतनी तेज़ी से बढ़ने का राज़ क्या है ? आप ही जैसे लोगों की पसन्द, जो चाहते हैं हर पैकेट से ज़्यादा प्यालियाँ चाय—गाढ़ी लिकर, मज़ेदार स्वाद और सुगंध वाली चाय—जो सचमुच तबीयत खुश कर दे ।

सिर्फ़ पैकेट की चाय ही रहती है तरोताज़ा और खुशबू से भरपूर ।

हर पैकेट से ज़्यादा प्यालियाँ, यही उसकी अधिक लोकप्रियता का राज़

LRDC-8/73 HIN

चिक्लेट्स®
अब ४ का पैक भी
२५ पैसे
4 PIECES
Chiclets
4 PIECES
Chiclets
4 PIECES
Chiclets
4 PIECES
4 PIECES
Chiclets
4 PIECES
Chiclets
4 PIECES
Chiclets
4 PIECES
हाँ, चिक्लेट्स अब ४ पलैट के नये पैक में भी मिलता है — सिर्फ २५ पैसे में। नये नये पैक्स में चूइंग गम अब और ज़्यादा मजेदार है। चार पलैट के नये पैक में अपने मनपसन्द स्वाद — पेपरमिन्ट, आरेन्ज, टुटी फ्रूटी और पाइन एपल का आनन्द उठाइये।
चिक्लेट्स विटामिन ए और डी से भरपूर तथा कैल्शियम सहित मज़ेदार चूइंग गम।

पालन-पोषण सही कीजिए; बच्चों को बोर्नविटा दीजिए!

पढ़ने लिखने में सर्वश्रेष्ठ... खेलकूद में आगे

पढ़ने और खेलने में बच्चों की खर्च हुई शक्ति की सही पूर्ति न हो तो इनका मानसिक और शारीरिक विकास अधूरा रह जाता है। रोज़ बोर्नविटा पीने से बच्चों की शक्ति बनी रहती है। पौष्टिक **कोको**, दूध, मॉल्ट और शक्कर के मिश्रण से बना हुआ बोर्नविटा बहुत ही स्वादिष्ट होता है।

शक्ति, उत्साह और
स्वाद के लिए—*कैडबरिज़* **बोर्नविटा!**

OBM-0449-HIN.

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी

संचालक : 'चक्रपाणी'

इस महीने की बेताल कथा "खोया हुआ मौक़ा" में दयानिधि ने वास्तव में कुछ नहीं खोया, उसके मन में धन व सुख भोगने की अपेक्षा शांति पाने और सेवा करने की अभिलाषा तीव्र थी। इसीलिए उसने फिर से अपने नगर में जाने व संपत्ति पाने का मौक़ा प्राप्त होने पर भी उसे खो दिया।

'मायानगर' नामक चीनी कहानी में सारा भ्रम ही है। पर भ्रम ही प्राण लेते हैं, यह बात भ्रम नहीं है। भ्रम में पड़कर ही राजा मर जाता है।

वर्ष : २६ नवम्बर १९७२ अंक : ५
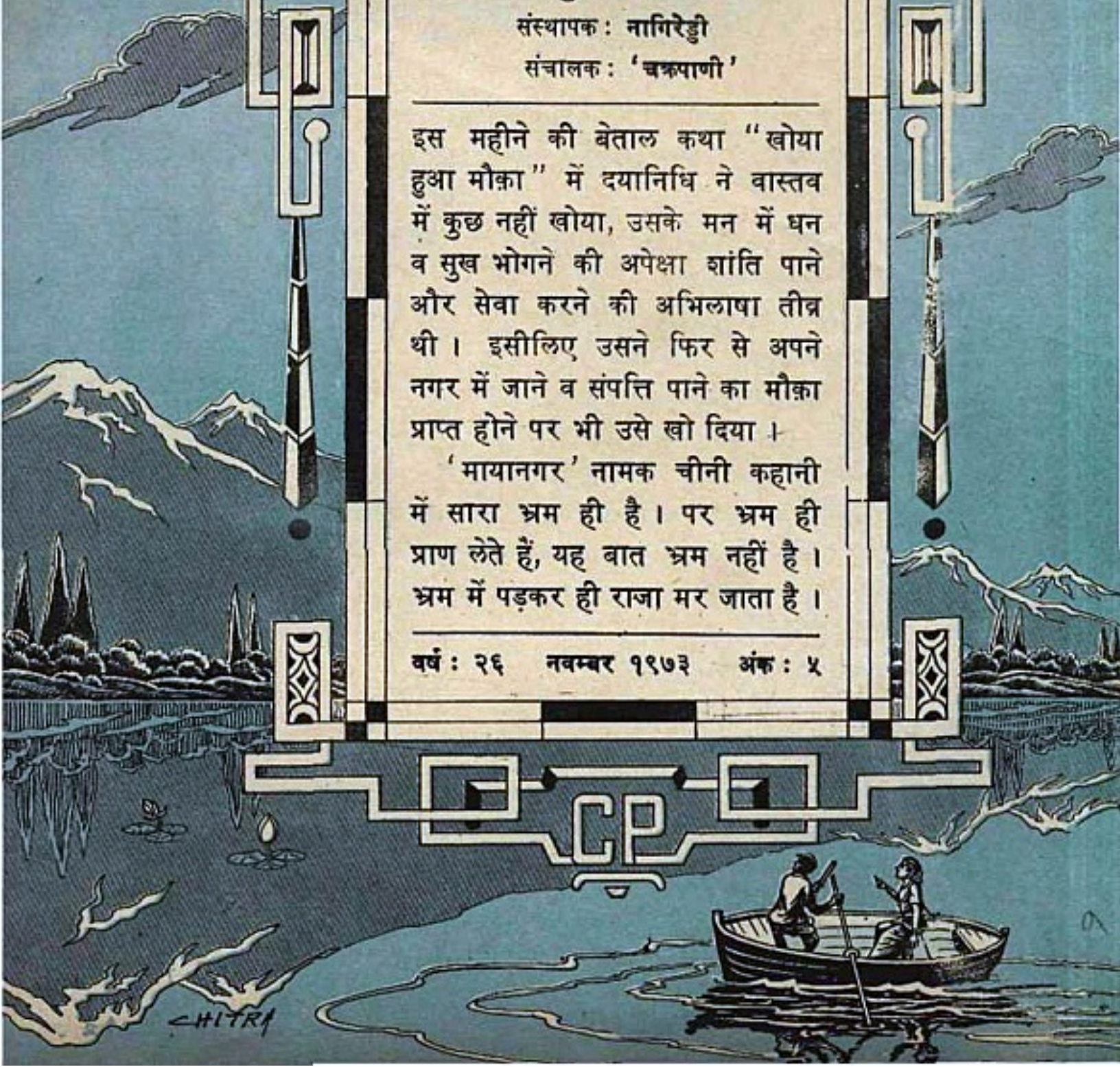
विपक्ष मखिली कृत्य प्रतिष्ठा खलु दुर्लभा ;
अनीत्वा पंकताम् धूलिम् उदकम् नावतिष्ठते । ॥ १ ॥

(माघ)

[शत्रु का निर्मूल किये बिना अपने को दृढ़ बना लेना असंभव है । धूल को कीचड़ के रूप में दबाने पर ही पानी ठहर सकता है ।]

सुखम् हि दुःखा न्यनुभूय शोभते
घनांधकारे ष्विव दीपदर्शनम् ;
सुखात्तु यो यति नरो दरिद्रताम्
मृत श्शरीरेण धृत स्स जीवति । ॥ २ ॥

(शूद्रक)

[दुखों के भोगने के बाद सुख प्राप्त होगा तो इस तरह शोभादायक होगा जैसे अंधकार में रहनेवाले को दीपक दिखायी दिया हो । सुख के बाद अगर दुःख का अनुभव करना पड़े तो शरीर के साथ जीने पर भी मौत के समान है ।]

सहासा विदधीत न क्रियाम् ;
अविवेकः परमापदाम् पदम् ;
वृणते हि विमृश्यकारिणम्
गुणलुब्धाः स्वय मेव संपदः । ॥ ३ ॥

(भारवि)

[कोई भी काम जल्दबाजी में आकर नहीं करना चाहिए । सभी विपत्तियों का मूल अविवेक ही है । जो गुणवान भले-बुरे का विवेचन करके काम करता है, संपत्तियाँ उसे ही वर लेती हैं ।]

महाकवियों की सूक्तियाँ

यक्ष पर्वत

[१७]

[गुरु भल्लूक को साथ लेकर खड्गवर्मा और जीवदत्त जंगल के एक सरोवर के पास पहुँचे। वहाँ पर उन्हें स्वर्णाचारी दिखाई दिया। समरबाहु की गैरहाज़िरी में उसके अनुचरों तथा वीरपुर के राजा के सैनिकों के बीच लड़ाई छिड़ गयी। राजा के सैनिक समरबाहु के अनुचरों पर टूट पड़े। बाद–]

वीरपुर के राजा के अजायब घर के अधिकारी के साथ अब केवल सात सैनिक ही बच रहे थे। उनमें से एक समरबाहु के अनुचरों के द्वारा घायल हो लंगड़ाते सब के पीछे चला आ रहा था। समरबाहु के अनुचर वहाँ चार ही थे और राजा के सैनिक ज्यादा थे, फिर भी हिम्मत करके वे लोग उन पर हमला करने को तैयार हो गये।

अजायब घर का अधिकारी समरबाहु के अनुचरों से थोड़ी दूर पर ही रुककर बोला–"अरे, तुम्हारा रवैया देखने से लगता है कि तुम लोग सार्थवाह हो। क्या पगड़ी बाँधने का यही तरीक़ा है? देखने में तुम लोग जंगली लगते हो? तुम्हारा तौर-तरीक़ा बड़ा ही विचित्र मालूम होता है। तलवार चलाना भी शायद तुम लोग ठीक से नहीं जानते!"

जो घायल हो चुका था, वह तथा अजायब घर का अधिकारी दुश्मन को पीठ दिखाकर अंधाधुंध भागने लगे। अपने नेता को भागते देख बाक़ी दोनों सैनिकों ने तलवार फेंक दी और लड़ना बेकार समझकर समरबाहू के अनुचरों के हाथों में अपने को आत्म समर्पित कर लिया।

इस छोटी-सी लड़ाई में समरबाहू के अनुचरों को एक साधारण विजय ही हाथ लगी थी, फिर भी वे लोग अपूर्व आनंद के साथ तलवार उठाये चिल्लाने लगे– "महाराजा समरबाहू की जय!" इस चिल्लाहट से सारा जंगल गूंज उठा और साथ ही दुश्मन का कलेजा कांप उठा।

ये बातें सुन समरबाहू के अनुचरों को बड़ा क्रोध आया। वे मूंछों पर ताव देते हुए गरजकर बोले–"हमारी तलवार के वार का मजा चखकर तुम्हारे तीन सैनिक इसी प्रदेश में धूल चाट रहे हैं। एक ने जैसे-तैसे जान बचा ली और तुम्हारे पीछे लंगड़ाते चला आ रहा है। अभी हम बतायेंगे कि हम क्या हैं। अब संभल जाओ! समरबाहू की जय!" यों उत्तेजित हो वीरसिंह के सैनिकों पर हमला कर बैठे।

इसके बाद समरबाहू तथा वीरसिंह के सैनिकों के बीच ज्यादा देर युद्ध न चला। वीरसिंह के सैनिकों में से तीन लोग पहले ही धराशायी हो चुके थे और चौथा सैनिक

उधर समरबाहू के अनुचरों की चिल्लाहट और इसके पूर्व की लड़ाई का कोलाहल यह सब सुनकर कुछ जंगली लोग यह देखने आये कि वहाँ पर आखिर क्या हो रहा है। उन्हें आत्म-समर्पण करके सिर झुकाये खड़े हुए वीरसिंह के सैनिक तथा तलवार उठाकर कोलाहल करनेवाले समरबाहू के अनुचर दिखाई दिये।

उन जंगली लोगों की समझ में यह नहीं आया कि किन किन लोगों के बीच युद्ध हुआ और किनकी जीत हुई तथा किनकी हार हुई? वे राजा वीरसिंह के

सैनिकों से परिचित थे। उस वक़्त वे लोग तलवार फेंककर चुपचाप खड़े हुए थे, इसलिए जंगली लोगों ने सोचा कि किसी और राजा के सैनिकों ने उन्हें लड़ाई में हरा दिया है, लेकिन इस नये राजा के सैनिक कौन? यह बात उन जंगलियों की समझ में न आयी।

समरबाहु के अनुचरों ने जंगली लोगों को आश्चर्य चकित होते देख आदेशपूर्ण स्वर में कहा—"तुम लोग जंगल के ही निवासी हो न? आज से तुम लोगों को वीरपुर के राजा को कर चुकाने की जरूरत नहीं है। हमारे राजा समरबाहु तुम सबका मालिक है। उन्हीं को तुम लोग राजा मानकर कर चुकाओ, वरना तुम लोगों को इसका फल भोगना पड़ेगा। समझें!"

जंगली लोगों में से एक वृद्ध ने आगे बढ़कर कहा—"महाशय, जैसा आप कहेंगे, वैसा करेंगे। हम लोगों में से कई लगों ने वीरपुर और उस नगर के राजा वीरसिंह को भी देख लिया है। आप नाराज़ मत होइयेगा। हम लोगों ने कभी आप लोगों को नहीं देखा है। हम आपका परिचय पाना चाहते हैं। इसलिए कृपया यह बताइये कि आपका नगर कहाँ पर है!"

समरबाहु के अनुचरों में से एक हाथ उठाकर दूर के पहाड़ों की ओर संकेत करते

बोला—"देखो, उन पेड़ों की ओट में जो पहाड़ दिखाई दे रहे हैं, उन पहाड़ों पर ही हमारा क़िला है। चाहे तो तुम में से कुछ लोग हमारे साथ आ जाओ, उस रास्ते को देख लो, तब अपनी बस्ती में जाकर हमने जो बातें बतायीं, उनका ढिंढोरा पिटवा दो।"

जंगली दल का बूढ़ा कुछ कहने को था, तभी घोड़ों की हिनहिनाहट सुनायी दी। उसे सुनते ही समरबाहु के अनुचर चौंक उठे। उनमें से एक व्यक्ति आहट होनेवाली दिशा की ओर देखते अपने दोस्तों से बोला—"ओह, बड़ी भूल हो गयी है। दुश्मनों में से दो लोग बचकर भाग गये

हैं। वे ही लोग तो ये घोड़े नहीं लाये? या कुछ और लोगों को जमा करके हम पर चढ़ाई करने तो नहीं आ रहे हैं? सब लोग सावधान हो जाओ। कोई यहाँ से भागने न पावे।"

यह संदेह पैदा होते ही समरबाहू के चार अनुचर अपनी आत्मरक्षा के लिए तैयार हो गये। लेकिन एक-दो क्षण बीतने के पहले ही दो जंगली दो घोड़ों की लगाम पकड़े वहाँ पर ले आये। उन्हें देखते ही सब विस्मय में आ गये।

समरबाहू के अनुचरों की समझ में कुछ न आया, वे चौंक कर उस ओर ताक ही रहे थे कि तभी जंगली वृद्ध ने घोड़े लानेवालों से पूछा-"यह क्या? तुम लोग इन्हें कहाँ से पकड़ लाये हो?"

"वीरपुर के राजा के दो सैनिक घोड़ों पर सवार हो भाग जाते हुए पास में ही पेड़ों से बंधे घोड़ों के रस्सों को काट देना चाहते थे जिससे कि घोड़े भड़क कर भाग जायें। हमने उन घोड़ों में से दो घोड़ों का पीछा करके बड़ी चालाकी से उन्हें पकड़ लिया है।" घोड़े लानेवाले जंगली बोल उठे।

"तुमने बड़ा अच्छा काम किया। हम अपने राजा से बताकर तुम्हारी युक्ति के लिए इनाम दिलायेंगे। इन दोनों घोड़ों को हमारे साथ क़िले में ले आओ।" समरबाहू के एक अनुचर ने कहा।

जंगली युवकों ने मान लिया। समरबाहू के अनुचर अपने बन्दी बने वीरसिंह के दो सैनिकों को साथ ले अपने ऊँटोंवाले प्रदेश की ओर चल पड़े। तभी उनके पीछे चलने वालों में से एक जंगली चिल्ला उठा-"महाशय, पिंजड़ों में बंद शेर और बाघों को तो भूल गये। कुछ जंगली पक्षी जाल में फँसे पेड़ों की डालों में से लटक रहे हैं-क्या उन्हें वहीं पर छोड़ देना चाहते हैं?"

यह सवाल सुनते ही समरबाहू के अनुचर झट रुक गये और बंदी बने वीरसिंह के

सैनिकों से उन जानवरों और पक्षियों के बारे में पूछा। सैनिकों ने बताया कि वे लोग चिड़ियाघर के अधिकारी के साथ कैसे शिकार करने के लिए जंगल में आये और कैसे उन शेर और बाघों को पकड़ लिया है।

"वाह, यह उपाय अच्छा है! ये पशु और पक्षी महाराजा समरबाहू के चिड़ियाघर में आराम से जीयेंगे। चलो, इन्हें पहाड़ी क़िले के नगर में ले जायेंगे।" समरबाहू के अनुचरों ने बताया।

इस बार समरबाहू के अनुचरों के पीछे सारे जंगली चल पड़े। जंगली के कहे मुताबिक़ पिंजड़े में बंद शेर पिंजड़े के सीखचों पर पंजा मारते, अपने दांतों से काटने का प्रयत्न करते भयंकर गर्जन करने लगा। बाघ भी दहाड़ने लगे थे। जाल में फँसे हुए पक्षियों का कोलाहल कुछ कहना ही क्या!

समरबाहू के अनुचरों ने उन्हें बड़े ही ध्यान से देखा और कहा—"सब ठीक ही है! हमने कभी खूंख्वार जानवरों को पालतू नहीं बनाया है। इसलिए हम लोग अजायब घर की बात बिलकुल नहीं जानते। इन पिंजड़ों को क़िले के पास कैसे ले जायेंगे?"

जंगलियों में से कुछ लोगों को समरबाहु के अनुचरों को ऊँटों पर देख संदेह हुआ था कि ये लोग इस प्रदेश के नहीं हैं। पिंजड़ों में बंद जानवरों के बारे में उनकी
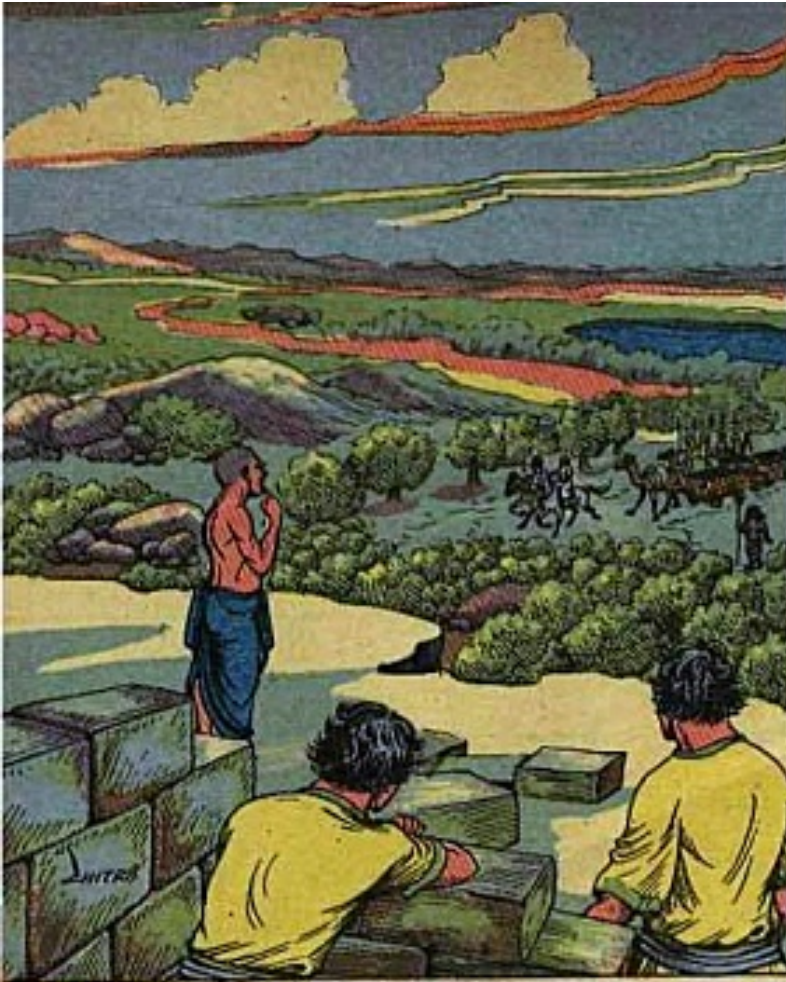
बातें सुनकर बूढ़ा जंगली आगे आया और बोला–"हुज़ूर! ये सारे पिंजड़े छोटे पहियों वाली गाड़ियों पर बिठाये गये हैं। जरा सावधानी से काम लीजिए। आप इन्हें घोड़ों या ऊँटों के द्वारा अपने नगर तक खिंचवा कर ले जा सकते हैं। तब इन पिंजड़ों को एक बगीचे में तरीक़े से रख सकते हैं। बगीचे के चारों तरफ़ दीवार बनानी होगी। उस बगीचे में जाने के लिए एक फाटक भी हो, जो समय पर ही खुले।"

"तब तो यह काम तुम्हीं करके हमारा हाथ बँटा दो। तुम्हें हमारे राजा के द्वारा अच्छे इनाम मिल जायेंगे।" समरबाहु के एक अनुचर ने कहा।

जंगलियों ने शेर तथा बाघवाले पिंजड़ों को रस्सों से दो ऊँटों के साथ बाँध दिया। एक दूसरे की पीठ पर जंगली पक्षियोंवाले जालों को कस दिया। इसके बाद सब पहाड़ी पर बननेवाले क़िले की तरफ़ बढ़े।

पहाड़ पर क़िले की दीवारें बनवाने वाले स्वर्णाचारी ने पहाड़ के नीचे चले आनेवाले ऊँटों, घोड़ों तथा उनके पीछे चलनेवाले जंगलियों को देख अचरज में आ गया और बोला–"अरे, यह क्या? हमारे दो आदमी घोड़ों पर सवार हो चले आ रहे हैं। वे पिंजड़े कैसे? जंगलियों का दल भी चला आ रहा है–जंगल में आखिर क्या हो गया है! शिकार खेलने के लिए तो हमारे चार ही लोग गये थे?"

समरबाहू के अनुचर स्वर्णाचारी की बातें सुनते ही ढोनेवाले पत्थरों को नीचे गिराकर पहाड़ी आँचल तक आये और घोड़ों तथा जंगलियों के प्रति विस्मय के साथ देखने लगे। घोड़ों पर सवार हुए दो में से एक जो समरबाहु का अनुचर था, सिर उठाकर ऊपर देख बोला–"अरे, महामंत्री आचारीजी हमें देख आश्चर्य में आ गये मालूम होता है। मैं पहले जाकर

उन्हें सारी बातें समझा देता हूँ।" यह कहते वह घोड़े पर से कूद पड़ा। पत्थरों पर छलांग मारते जाकर स्वर्णाचारी के निकट पहुँचा।

अपनी तरफ़ आनेवाले समरबाहू के अनुचर को देख स्वर्णाचारी ने उत्सुकता पूर्वक पूछा—"अरे, तुम लोग शिकार खेलने गये थे न? ये घोड़े कहाँ से लाये? शेर के पिंजड़े ला रहे हैं? ये जंगली हमारे यहाँ क्यों आ रहे हैं?"

इस पर समरबाहू के एक अनुचर ने स्वर्णाचारी के निकट जाकर प्रणाम किया और कहा—"महामंत्रीजी, हमने जंगल में वीरपुर राजा के सैनिकों को लड़ाई में बुरी तरह से हरा दिया। दो लोगों को बंदी बनाया। सात लोगों के सिर काट दिये। दो लोग अपनी जान हथेली पर लेकर वीरपुर की ओर भाग गये हैं।"

यह बात सुनते ही स्वर्णाचारी आपाद मस्तक काँप उठा कि दुश्मनों में से दो व्यक्ति प्राणों के साथ वीरपुर की ओर भाग गये हैं। उसे विजय की खबर से कोई खुशी न हुई। उसने सोचा कि बिना आगे पीछे सोचे समरबाहू के अनुचर उन सब को बड़ी आफ़त में फँसाने जा रहे हैं।

स्वर्णाचारी ने आँखें लाल करके समरबाहू के अनुचर से कहा—"तुमने बताया कि वीरसिंह के दो सैनिक प्राणों के साथ बचकर भाग गये हैं। उनके द्वारा शीघ्र हमें आफ़त आनेवाली है? अरे इस तरह तुम लोग हाथ लगे दो लंगड़े घोड़ों को साथ ले आये हो, मानों किन्हीं यज्ञ के अश्वों को पकड़ लाये हो। यह तो मूर्खता की बात थी। असल में तुम लोगों ने उस राजा के सैनिकों के साथ झगड़ा क्यों मोल लिया?"
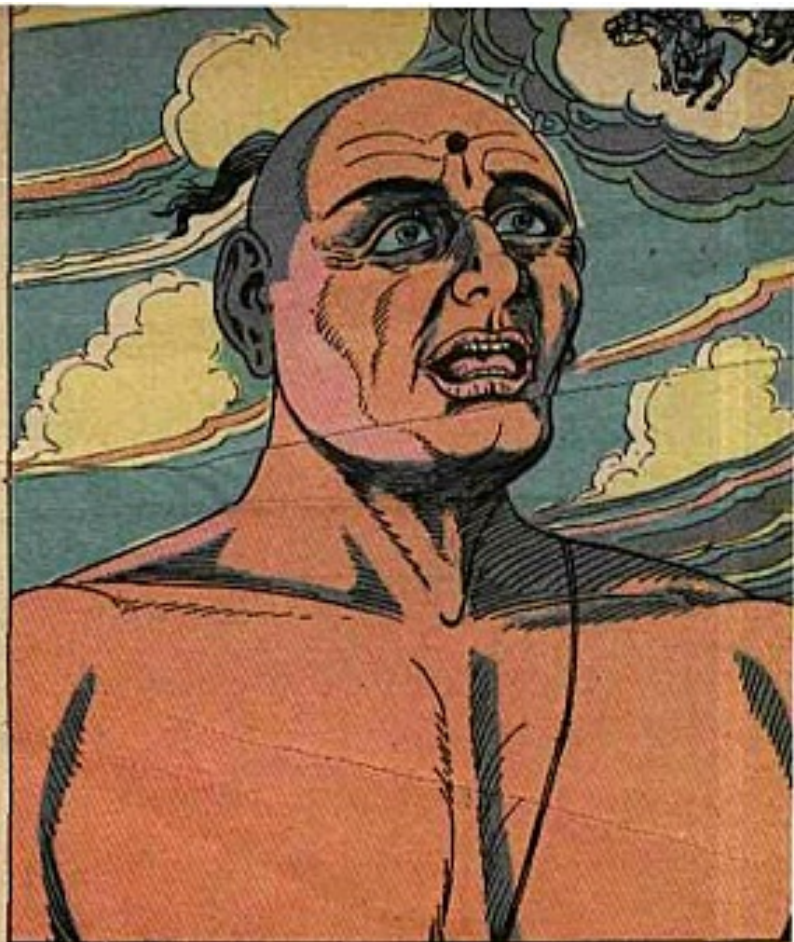
स्वर्णाचारी का क्रोध देख समरबाहू के अनुचर ने समझा कि उसने गलती की है। इसलिए उसने अपनी करनी का समर्थन करने के लिए नमक-मिर्च लगाकर कुछ कहा। उसने कहा—"दुश्मन ने हमारे राजा

समरबाहू का अपमान किया, साथ ही दल बाँध कर आये और ऊँटों पर हमला करके उन्हें हाँक ले जाने लगे।" यों और कुछ झूठी बातें बतायीं।

सारी बातें सुन स्वर्णाचारी थोड़ी देर सोचते मौन रहा, तब वहाँ पर जमा हुए समरबाहू के अनुचरों को लक्ष्य करके बोला—"चाहे जो भी हो, इस वक़्त हमारे लिए कोई सुरक्षा नहीं है। ऐसी हालत में उस वीरपुर के राजा के साथ दुश्मनी मोल नहीं लेना चाहिए था। भाग गये हुए वे दोनों सैनिक अपने राजा को सारी बातें सुनायेंगे। राजा खुद या अपने सेनापति के नेतृत्व में सेना भेजकर निर्माणावस्था में स्थित हमारे क़िले पर हमला कर बैठेगा। वक़्त पर महाराजा समरबाहू भी यहाँ पर नहीं हैं। वे क्षत्रिय युवक खड्गवर्मा तथा जीवदत्त भी होते, तो हम इस खतरे से बच सकते थे।"

स्वर्णाचारी के यों कहने के बाद ही समरबाहू के अनुचरों को होनेवाले भयंकर ख़तरे का बोध हुआ; वे चिंता के मारे एक दूसरे के चेहरे ताकने लगे। स्वर्णाचारी की कल्पना के अनुसार जंगल में समरबाहु के अनुचरों से बचकर जो दो सैनिक भाग गये थे, वे अजायब घर का अधिकारी और एक सैनिक थे। वे दोनों वीरपुर नगर के प्रधान मार्ग से अपने घोड़ों को दौड़ाते चिल्लाने लगे—"देश के सामने ख़तरा पैदा हो गया है। शत्रुराजा जंगल में बहुत बड़ा क़िला बनाकर हम पर अपनी सेनाओं को भेज रहा है। सब लोग सावधान हो जाओ!"

ये शब्द सुनकर नगर के कुछ नागरिक गलियों में जहाँ-तहाँ जमा हो गये। अपने नगर की होनेवाली बुरी हालत की चर्चा करते भय कंपित होने लगे। कुछ लोग गली-कूचों में दौड़ते चिल्लाकर कहने लगे—"नगर की रक्षा के लिए तलवार, भाले, कुल्हाड़ी-लाठी, जो भी हाथ लगे, उसे लेकर एकदम तैयार हो जाओ।"

(और है)

खोया हुआ मौक़ा

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा– "राजन, मैं नहीं जानता कि तुम इस रात के वक़्त इस प्रकार श्रम उठाते हुए न मालूम अनजाने में कितने अच्छे मौक़े खो रहे हो! मगर अपने लिए प्राप्त एक अच्छे मौक़े को दयानिधि जान बूझकर खो बैठा। श्रम को भुलाने के लिए मैं तुम्हें दयानिधि की कहानी सुनाता हूँ।"

बेताल यों कहने लगा: दयानिधि का पिता एक प्रसिद्ध नौका व्यापारी था। उसने अपना सारा जीवन विदेशों के साथ व्यापार करने में बिताया और करोड़ों रुपये भी कमाये। दयानिधि उसका इकलौता पुत्र था। इसलिए पिता ने सोचा

बेताल कथाएं
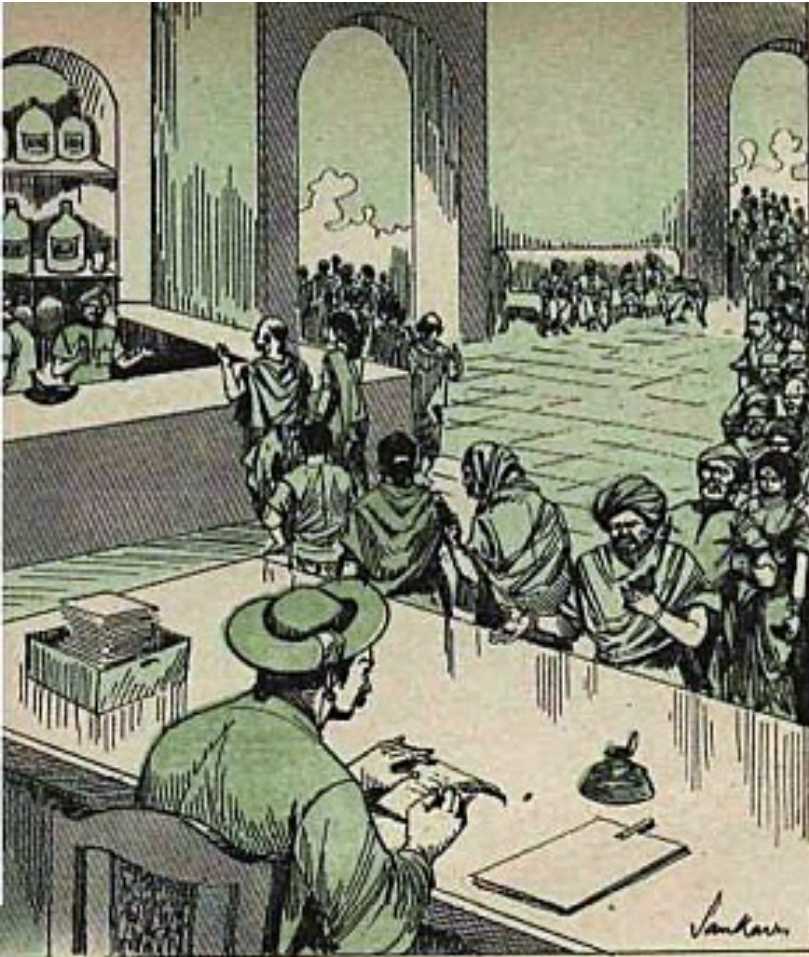
अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। उसने यह भी सोचा कि पिता की मृत्यु के बाद अपनी बची खुची संपत्ति का उपभोग करते हुए रोगियों की चिकित्सा में ही अपना सारा जीवन व्यतीत करे।

दयानिधि को उसके पिता ने अनेक प्रकार से समझाया, परंतु वह दयानिधि के मन को व्यापार की ओर मोड़ नहीं पाया। दयानिधि का पिता इस चिंता में पड़कर बीमार हो गया कि दयानिधि दवाइयों के पीछे पागल हो अपनी ज़िंदगी को बरबाद कर बैठेगा। इसी चिंता में वह मर भी गया।

कि दयानिधि भी उसके पद-चिह्नों पर चलकर नौका व्यापार करेगा, उससे भी अधिक धन तथा यश कमाकर उसका यश भी फैला देगा।

लेकिन दयानिधि इसके ठीक विपरीत चलने लगा। व्यापार के प्रति उसके मन में कोई अभिरुचि न थी। उसकी समझ में नहीं आया कि पिता ने जो करोड़ों रुपये कमाये हैं, उनका क्या किया जाय! दयानिधि बचपन से ही वैद्यशास्त्र के प्रति विशेष अभिरुचि रखता था। इसलिए उसने वे सभी वैद्य ग्रन्थ पढ़े, जो उसके हाथ में आये। हज़ारों जड़ी बूटियों की खोज करके उनके द्वारा औषधियाँ तैयार करना

अपने पिता के मरते ही दयानिधि ने एक बड़ा चिकित्सालय खोला और रोगियों का मुफ़्त में इलाज़ कराने लगा। इसके पीछे जो धन खर्च हुआ, वह उसकी पिता की संपत्ति में से एक सहस्त्र अंश भी न था। इसलिए दयानिधि की समझ में नहीं आया कि उसका पिता अनावश्यक क्यों दुखी हो गया था।

मुफ़्त चिकित्सालय में इलाज पाना धनी व प्रतिष्ठित लोगों के लिए अपमानजनक प्रतीत हुआ, पर देश के गरीब लोग हज़ारों की तादाद में आकर अपनी बीमारियों का इलाज़ करवाकर ख़ुशी ख़ुशी लौट जाते थे। इस कारण से दयानिधि के चिकित्सालय

को बड़ा नाम मिला, साथ ही एक प्रसिद्ध वैद्य के रूप में दयानिधि का नाम भी चारों तरफ़ मशहूर हो गया।

लेकिन दयानिधि का कार्य दो प्रकार के लोगों को पसंद न आया। एक तो स्वयं वैद्य थे, जिनका पेशा इलाज करना था। उन्हें भारी नुक़सान हुआ। वैसे धनी लोग उनके यहाँ जाकर इलाज करवाते थे, फिर भी वे यदि किसी बीमारी का इलाज न करा पाते तो वे लोग दयानिधि के पास जाकर उस बीमारी का इलाज कराकर स्वस्थ हो जाते थे, इसलिए उन लोगों ने सोचा कि दयानिधि के द्वारा भविष्य में उनके पेशे के लिए खतरा पैदा हो सकता है।

देश के प्रसिद्ध व्यापारियों को भी दयानिधि का यह काम पसंद नहीं आया। वे सब धन जमा करके यश प्राप्त कर चुके हैं। मगर दयानिधि जनता की भलाई के लिए अपना निजी धन खर्च करके उन व्यापारियों से दस गुना अधिक यश प्राप्त कर रहा है। अलावा इसके कुछ लोग जब तब यह प्रश्न भी उठाने लगे कि बाक़ी व्यापारी भी दयानिधि जैसे कोई न कोई उपयोगी कार्य करके जनता की भलाई क्यों नहीं करते?

इस प्रकार वैद्यों तथा व्यापारियों के लिए भी दयानिधि कांटा बन बैठा। वे हमेशा यह सोचने लगे कि कैसे उसका विनाश करे। इस बीच में उस राज्य पर

शासन करनेवाला सामंत राजा का देहांत हो गया और उसका पुत्र राजा बन बैठा। नया राजा बड़ा लोभी था। गद्दी पर बैठते ही नया राजा कोई न कोई बहाना बनाकर धनियों से धन ऐंठने लगा। उसकी इस दुर्बुद्धि को आसरा बनाकर कुछ वैद्यों तथा व्यापारियों ने राजा के पास जाकर शिकायत की कि दयानिधि ने किसी के यहाँ वैद्य विद्या नहीं सीखी, एक चिकित्सालय बनाकर लोगों को अपनी ओर आकृष्ट करके रोगियों को मार रहा है, राजा को मालूम हुआ कि दयानिधि के पास अनेक भवन, बगीचे और कई प्रकार की जायदाद है। सामंत राजा ने चुपचाप दयानिधि की सारी संपत्ति पर क़ब्ज़ा कर लिया, चिकित्सालय बंद करवाया और दयानिधि को देश निकाला सजा सुनायी। दयानिधि हताश हो गया। धर्म चिकित्सालय के बंद होते देख गरीब लोग रो पड़े; मगर उनकी बिनती सुननेवाला कोई न था।

दयानिधि को देश छोड़कर जाना था, इसलिए वह समुद्री तट पर पहुँचा। वहाँ पर एक नौका समुद्री यात्रा के लिए तैयार खड़ी थी। उस नौका के मालिक को जब मालूम हुआ कि दयानिधि अमुक व्यापारी का पुत्र है, तब उसने बड़ी खुशी से दयानिधि को अपनी नौका पर ले लिया, उसकी सारी कहानी सुनकर उसे आश्वासन दिया कि वह जिस बंदरगाह में चाहे, उतर सकता है। मगर दुर्भाग्य से समुद्र के बीच नौका तूफ़ान का शिकार हो गयी और टूटकर डूब गयी। दयानिधि नौका के एक तख़्ते पर लेटकर कई दिनों तक तैरता रहा, आखिर बेहोशी की हालत में वह एक किनारे जा लगा।

दयानिधि एक बड़े टापू में जा पहुँचा था, जहाँ पर आदिवासी रहा करते थे। बेहोशी की हालत में दयानिधि को एक युवती ने देखा, वह दयानिधि के मुँह पर पानी छिड़ककर उसे होश में लायी।

इसके बाद उसे पीने को कांजी दे दी, तब जाकर दयानिधि में थोड़ी-बहुत चलने की ताक़त आ गयी। तब वह उस युवती के पीछे एक देहात में चला गया। वहाँ पर लोगों ने उसे घेर लिया। वे सभ्यता से बिलकुल अपरिचित थे। मगर उनके बीच उच्च-नीच का भेदभाव न था। वे कपड़े की जगह पत्ते व छिलके पहनते थे। वे कोई अनाज पैदा करते हैं, उस अनाज के साथ, पेड़ों के फल व शिकार खेलकर जानवरों का मांस खाकर जीते थे।

जल्द ही दयानिधि ने आदिवासियों की बोली सीख ली। उन्हीं की ज़िंदगी जीते आखिर उसकी सेवा करनेवाली युवती के साथ शादी भी कर ली।

उस टापू के निवासियों में साधारणत: आँखों की दृष्टि का लोप हो जाने की बीमारी होती थी। दयानिधि ने कारण पूछा तो उन लोगों ने यही बताया कि कुछ वर्षों से अनेकों को एक साथ यह बीमारी होती है और इस बीमारी के होते ही अधिकांश लोग अंधे हो जाते हैं।

"तुम्हारी भी आँखें अंधी हो सकती हैं।" दयानिधि की पत्नी ने कहा।

"कोई डरने की बात नहीं, जिस वातावरण में जो बीमारी होती है, उस वातावरण में उस बीमारी को ठीक करनेवाली औषधियाँ भी होती हैं। मैं इलाज करना जानता हूँ, वैद्य हूँ। इस बार इस बीमारी के होने से पहले मैं

के लिए आवश्यक औषधियाँ भी तैयार कीं, इस तरह उनके स्वास्थ्य की रक्षा करने लगा।

एक दिन दयानिधि और उसकी पत्नी खेत में काम कर रहे थे, तभी एक नौका उस तट की ओर पानी की खोज में आयी। नौके का मालिक कुछ नाविकों को साथ ले उस टापू में आया। उसने दयानिधि को देखते ही पहचान लिया और उसके साथ आलिंगन करके कहा– "तुम अब तक जिंदा हो? इस प्रदेश में तुम कैसे आ पहुँचे, उस जहाज के डूबने पर सब लोग मर गये थे न?"

दयानिधि ने अपने मित्र को सारी बातें बतायीं; तब उसके मित्र ने यों कहा:

"तुम अपने देश को छोड़कर चले गये। हमारे सामंत के बारे में सम्राट के पास कई शिकायतें पहुँचीं, इन सबके साथ तुम्हारे साथ जो अन्याय हुआ है, उसका भी उन्हें परिचय मिला। सम्राट ने प्रकट रूप से तथा गुप्त रूप से भी सभी शिकायतों की तहकीक़ात करायी, हमारे सामंत को मृत्यु का दण्ड देकर हमारे राज्य में नये राजा को नियुक्त किया है। तुम्हारे लिए जो जो दण्ड दिये गये थे, वे सब रद्द हो गये हैं; तुम्हें इन जंगली लोगों के बीच रहने की कोई जरूरत नहीं। तुम अपनी सारी संपत्ति का अनुभव कर

उसके लिए दवा तैयार करूँगा।" दयानिधि ने कहा।

इसके बाद तुरंत दयानिधि अपनी पत्नी के साथ पहाड़ों में चला गया। कुछ जड़ी बूटियाँ प्राप्त करके उनके गुणों की जांच की, थोड़ी-सी दवाएँ तैयार कर रख दीं। इतने में वह बीमारी फैल गयी। उसने सभी रोगियों को यह दवा दी, जिससे बहुत से लोग अंधे होने से बच गये।

उस दिन से उस टापू के लोग दयानिधि को देवता के समान मानने लगे। दयानिधि ने वहाँ की जाति के लोगों में फैलनेवाली अन्य बीमारियों का भी पता लगाया। वहाँ की जड़ी-बूटियों द्वारा उन बीमारियों

सकते हो। फिर से चिकित्सालय चलाओ, तुम मेरी नौका में आ जाओ, मैं हमारे देश को ही लौट रहा हूँ।"

दयानिधि ने बड़े ही उत्साह के साथ अपने मित्र के मुँह से ये सारी बातें सुनीं, तब दृढ़ता के साथ कहा—"मैं इस टापू को छोड़कर नहीं आऊँगा। तुम्हारे लिए आवश्यक अन्न और जल दिलाऊँगा।"

दयानिधि के मित्र ने सोचा कि नौका की दुर्घटना के कारण उसका दिमाग खराब हुआ होगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, दयानिधि अपने देश को लौटकर अतुल संपत्ति का अनुभव कर सकता था और हज़ारों लोगों की चिकित्सा करते आराम से जीने का मौक़ा हाथ लगने पर भी उसने उसे क्यों इनकार किया? उसे आदिवासियों के बीच जंगली जीवन बिताना इससे कहीं अच्छा क्यों लगा? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने जवाब दिया—"दयानिधि का मन संपत्ति या सुख भोगों में लिप्त रहने में संतुष्ट होनेवाला नहीं है। उसकी सारी तक़लीफ़ों की जड़ उसका धनवान होना ही है। उसे आत्म संतोष बीमारियों को दूर करने में होता था। उसे मुसीबतों में फँसानेवाले राजा का तो देहांत हो गया है, पर उस राजा को प्रेरित्त करनेवाले धनी और वैद्य जीवित्त हैं। इसलिए उसकी मातृभूमि में उसका आशय बेरोकटोक संपन्न न होगा। उन आदिवासियों के समाज में धन का सवाल उठता ही नहीं, वह जितनी सफलता के साथ चिकित्सा कर सकेगा, उतने ही वह उन लोगों के निकट संपर्क में जाएगा। इस ज़िंदगी में धन रूपी पिशाच का साम्राज्य नहीं है। इसीलिए दयानिधि ने उस टापू में रहने का निश्चय कर लिया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

बड़ा कौन है?

एक गांव में रंगनाथ और रमाबाई नामक दंपति थे। रमाबाई बड़ी झगड़ालू थी, रंगनाथ गुस्सैल था। इसलिए वे दोनों हमेशा इस बात पर झगड़ा करते थे कि मैं बड़ा हूँ, मैं बड़ी हूँ।

दोनों में इस बात का फ़ैसला न हो सका। आख़िर मुखिये के पास जाकर पूछा– "आप बताइए कि पति-पत्नी में बड़ा कौन है?"

"इसके लिए एक कहानी है। उसे सुनोगे तो तुम्हें मालूम हो जाएगा।" यों मुखिये ने उन्हें एक कहानी सुनायी।

"एक दंपति दूर की यात्रा करते एक बरगद के नीचे आराम करने रुके, पति अपनी पत्नी की जांघ पर सिर रखकर लेट गये। तब बरगद की एक डाल टूटकर उन पर गिरने को हुई। इसे देख पत्नी ने एक बाल फेंककर उस डाल को दूर गिरा दिया। इसलिए तुम्हीं लोग निर्णय कर सकते हो कि बड़ा कौन है?" मुखिये ने कहा।

"और क्या? पत्नी ही तो बड़ी है।" रमाबाई चिल्ला पड़ी।

"नहीं, ऐसी बड़ी पत्नी के द्वारा समस्त प्रकार की सेवा पानेवाला पति बड़ा है।" रंगनाथ ने झट जवाब दिया।
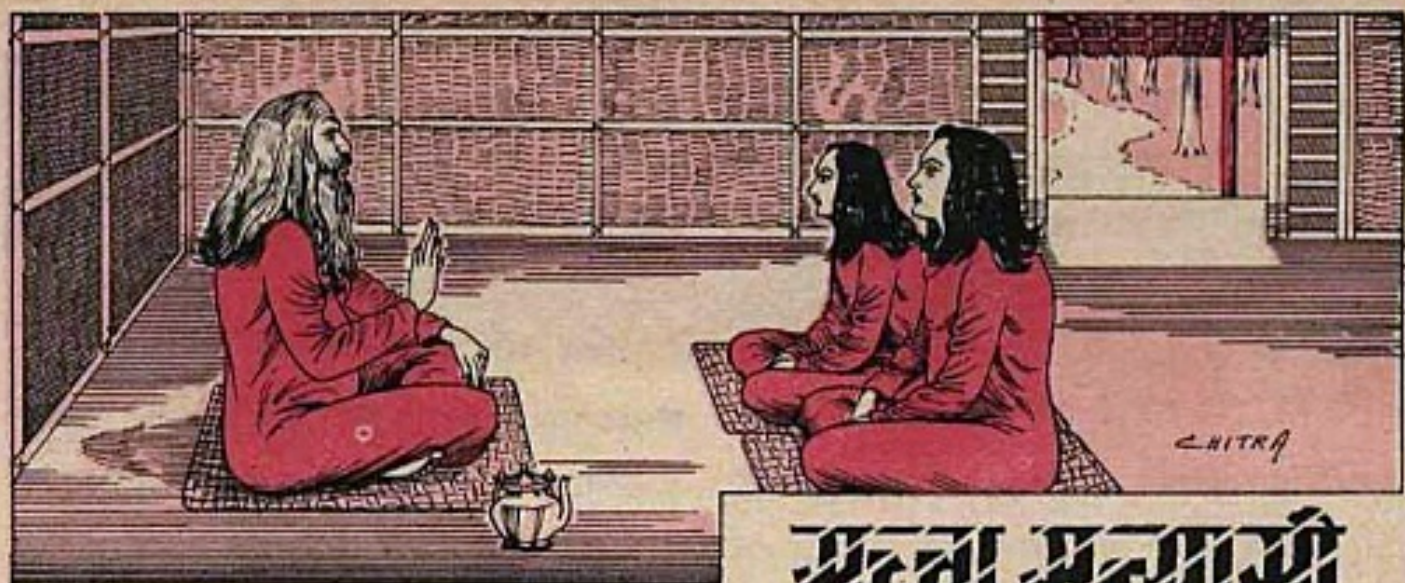
सच्चा सन्यासी

एक गाँव में एक बड़ा सन्यासी था। लोग कहते थे कि उस सन्यासी ने इंद्रियों पर अधिकार कर लिया है। उसके यहाँ आनंद और भैरव नामक दो शिष्य थे। जिस दिन वे दोनों सन्यासी के पास पहुँचे, उसी दिन सन्यासी ने उन्हें दो कर्तव्य बताये: एक: स्त्री तथा धन को छूना नहीं चाहिए। दो: विपत्तियों में फँसे हुए लोगों की यथाशक्ति सहायता करनी चाहिए।

सन्यासी ने उन्हें यह भी बताया कि इन दो नियमों में से पहला नियम कष्टों से व्यक्ति की रक्षा करता है। दूसरा नियम जीवन को सार्थक बनाता है। सन्यासी की इन बातों पर दोनों शिष्यों का विश्वास जम गया। उन दोनों ने जीवन पर्यंत सन्यासी के पास रह जाने का निर्णय कर लिया।

रोज़ वे तीनों नदी में जाकर स्नान करके लौटते थे। उस वक़्त सन्यासी अपने शिष्यों को ज्ञान का बोध करता था। इसके बाद तीनों गाँव में जाकर भिक्षाटन करते और कुटी में लौटकर भोजन करते थे। दुपहर को शिष्य अपने पाठ याद करते, फिर शाम को नदी में स्नान, अध्ययन और भिक्षाटन करते।

रोज की भांति एक दिन सन्यासी, आनंद और भैरव भिक्षाटन के लिए चल पड़े और गाँव में तीनों तीन दिशाओं में गये। आनंद ने एक गली में मुड़ते ही देखा कि एक लड़का रोते वहाँ पर खड़ा हुआ है। आनंद ने उसके निकट जाकर पूछा—"तुम रोते क्यों हो?" लड़के ने यों जवाब दिया:

"मैं एक अमीर के घर नौकरी करता हूँ। मेरे मालिक ने सोने की एक माला मेरे हाथ देकर उसे सुनार से ठीक कराने को

ज्योत्स्ना मिश्र

भेजा। मैं इस गली के नुक्कड़ पर पहुँचा ही था कि कोई चोर मेरे हाथ की माला को खींचकर भाग गया। मैं अपने मालिक से सच्ची बात बता दूँ तो वे मेरी चमड़ी उधेड़ डालेंगे। इसीलिए डरकर मैं रो रहा हूँ।"

आनंद ने लड़के के द्वारा जान लिया कि चोर किस ओर भाग गया है, वह भी उस लड़के के साथ उस दिशा में भाग गया। थोड़ी देर बाद उन्हें एक आदमी धीरे से चलते दिखाई पड़ा।

"वह लाल धोती पहना हुआ व्यक्ति ही चोर है।" लड़के ने बताया।

यह बात सुनते ही चोर भाग खड़ा हुआ। आनंद उसका पीछा करते दौड़ने लगा। उस वक़्त भैरव उस दिशा में आया। आनंद को दौड़ते देख भैरव ने लड़के से पूछा कि आखिर इसका कारण क्या है! लड़के ने सोने की माला की चोरी की बात बतायी।

भैरव को इस बात का डर लगा कि आनंद उस चोर को पकड़कर सोने की माला छू लेगा। गुरूजी ने सोना छूने से मना कर दिया है। इसलिए आनंद क़ो रोकने के लिए भैरव भी उसके पीछे दौड़ने लगा।

चोर बहुत दूर तक दौड़ा, आखिर एक नाले के पास रुक गया। वह नाला तो छोटा था, पर छलांग मारकर पार किया नहीं जा सकता था। चोर सोचता ही रहा कि क्या किया जाय? तभी

आनंद ने आकर चोर को पकड़ लिया। आनंद बलिष्ठ आदमी था और चोर दुबला-पतला। इसलिए चोर आनंद से लड़ना नहीं चाहता था, उसने सोने की माला आनंद के हाथ में दे दी और उसे प्रणाम करके माफ़ी माँग ली। आनंद ने उसे छोड़ दिया।

भैरव आनंद के हाथ में सोने की माला देख बोला–"आनंद, यह तुमने क्या किया? सोने को छू लिया है!"

आनंद कोई उत्तर देने ही वाला था कि तभी उन्हें एक नारी का कंठ सुनाई पड़ा। आनंद ने देखा कि नाले के उस पार एक सुंदर युवती खड़ी है और नाला पार करने में मदद माँग रही है।

नारी को देखते ही भैरव ने अपना मुँह मोड़ लिया। आनंद कमर तक पानीवाले उस नाले में उतर पड़ा, उस पार जाकर उस नारी को अपने हाथों से उठाया और इस पार ले आया। उस नारी ने आनंद के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और अपने रास्ते चली गयी।

इस देख भैरव ने आनंद से बात नहीं की। आनंद ने सोना छूने के अपराध में पश्चात्ताप नहीं किया, उल्टे नारी को भी छूकर गुरूजी के बताये प्रथम नियम का पूर्ण रूप से उल्लंघन किया है। आनंद वह माला लड़के के हाथ देकर भिक्षाटन को गया।

भैरव उस दिन थोड़ी देर पहले ही कुटी को लौट आया। सन्यासी के आते ही सारी बातें उसे सुनायीं।

सन्यासी ने हँसकर उत्तर दिया– "आनंद को आने दो, पता लगाऊँगा।"

आनंद के लौटते ही सन्यासी ने पूछा– "आनंद, मैंने तुम्हें जो नियम बताये, उनका स्मरण करके ही तुमने भिक्षाटन किया है न?"

"जी हाँ!" आनंद ने उत्तर दिया।

"आज कोई विशेषता नहीं है?" सन्यासी ने फिर पूछा।

"मैं वक़्त पर दो व्यक्तियों की सहायता कर सका।" आनंद ने जवाब दिया।

"वे दोनों कौन हैं?" सन्यासी ने फिर पूछा।

"मैंने ठीक से नहीं देखा कि वे कौन थे। एक तो विपत्ति में पड़ा था, दूसरा अपनी ज़रूरत के लिए परेशान था। उन्हें मैंने यथाशक्ति मदद पहुँचायी है। आपने आदेश दिया था कि किसी के साथ ज्यादा स्नेह नहीं बढ़ाना है। मैं उन दोनों को उसी वक़्त भूल गया हूँ।" आनंद ने बताया।

"अच्छी बात है. जल्दी हाथ-मुंह धोकर आ जाओ, भोजन करेंगे।" सन्यासी ने यों कहकर आनंद को बाहर भेजा, तब भैरव को समझाया–"देखते हो न! आनंद सच्चा सन्यासी है। मैंने जो नियम बताये, उन्हें उसने ठीक से समझ लिया है। नारी और धन का स्पर्श न करने का मेरा मतलब उनकी कामना न करने का है। उसने बिना किसी प्रकार की इच्छा या कामना के सोना और नारी को छुआ है। मगर तुम उन्हें छुए बिना ही सोना को सोना और स्त्री को स्त्री नामक विषय को भूल नहीं पाते हो! उसने अपने हाथों से जिनका स्पर्श किया, उन्हें तुम अब भी अपने मन से छू रहे हो।"

भैरव ने अपनी गलती जान ली और शर्म के मारे अपना सिर झुका लिया।

सोमशर्मा

राजा भोज सैकड़ों कवियों को अपने दरबारी कवि बनाकर न केवल उनका पोषण करता था, बल्कि कोई भी कवि दरबार में आता तो उसे बहुत-सा धन देकर सम्मान करके भेज देता। मगर कालिदास ने अपनी बुद्धिमत्ता के द्वारा ऐसे गरीब ब्राह्मणों को भी राजा के समक्ष महान मेधावी प्रदर्शित कराकर उन्हें धन दिलाया जो बिलकुल ही मूर्ख थे।

ऐसे निरे मूर्ख ब्राह्मणों में सोमशर्मा एक था। सोमशर्मा महान दरिद्र और अशिक्षित था। वह भिक्षाटन करके अपना पेट पालता था। सोमशर्मा ने सुन रखा था कि उसके जैसे मूर्खों को भी कालिदास ने राजा के द्वारा पुरस्कार दिलाये हैं, वह कालिदास के पास गया। अपने सारे कष्ट सुनाकर राजा के द्वारा पुरस्कार दिलाने की प्रार्थना की।

"तुमने क्या क्या पढ़ा है?" कालिदास ने सोमशर्मा से पूछा।

सोमशर्मा ने लज्जा का अनुभव करते हुए जवाब दिया—"मैंने कुछ नहीं पढ़ा है। राजदरबार में पुरस्कार पाने की मेरी कोई योग्यता नहीं है। आप कृपया मुझे थोड़ा धन दिलावे तो मैं अपने परिवार का पोषण कर सकता हूँ।"

"महाशय, राजा भोज पंडितों और कवियों को ही पुरस्कार देते हैं। बाक़ी लोगों को कुछ दिलाना मुमकिन नहीं है। फिर भी मेरे कहे अनुसार करोगे तो थोड़ा बहुत लाभ हो सकता है। मैं आपको राजा भोज के द्वारा बुलवाने का प्रबंध करूँगा। जब वे बुलायेंगे, तब एक कैथे का फल उनके सामने रखकर उन्हें आशीर्वाद दो—"गारायः" बाद की बात मैं देख लूँगा।"

चिंतामणि शर्मा

उस दिन के दरबार में कालिदास राजा भोज से बात कर रहा था। राजा को बहुत ही प्रसन्न देख संदर्भवश बोला– "महाराज, हमारे दरबार में कोई पंडित आया हुआ है; वह महान पंडित और शास्त्रवेत्ता प्रतीत होता है।"

यह बात सुनते ही राजा ने उस पंडित को बुलाने का आदेश दिया। कालिदास ने सोमशर्मा के वास्ते एक सेवक को भेजा। वह सेवक सोमशर्मा को एक पालकी में ले आया। पालकी में से उतरते समय सोमशर्मा को निकट ही एक ऊँट दिखायी दिया। सोमशर्मा ने कभी कोई ऊँट नहीं देखा था। इसलिए उसने वहाँ के लोगों से पूछा–"वह कौन-सा जानवर है?"

लोगों ने बताया–"वह जानवर उष्ट्रम् है।"

मूर्ख सोमशर्मा कालिदास की बतायी गयी बातों के साथ उस शब्द को भी जोड़कर याद करते हुए राजा के सामने पहुँचा, कैथे को राजा के सम्मुख रखकर राजा को आशीर्वाद दिया–"उशरट गाराय:"

उस आशीर्वाद का अर्थ न समझने की वजह से सभी दरबारियों के चेहरे सफ़ेद पड़ गये। राजा भोज ने कालिदास से पूछा–"इस पंडितजी के आशीर्वाद का अर्थ क्या हो सकता है?"

कालिदास ने यों श्लोक पढ़ा :

"उमया सहितो देव
शशंकर श्शूलपाणि ना
रक्षतु त्वां हि राजेन्द्र!
टकारो घनगर्जनः"

याने उ (उमा) से मिले श (शंकर) र (रक्षा करे!) ट (टटट) गरजते मेघ वर्षा करें! इस प्रकार वे महापंडित आपको आशीर्वाद दे रहे हैं। यह बात स्पष्ट मालूम हो रही है न!

राजा ने प्रसन्न हो सोमशर्मा का सत्कार किया और उसे काफ़ी धन देकर भेज दिया। सोमशर्मा कालिदास के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करके आराम से जीने लगा।

कंजूस

कोशिल नामक गाँव में रामना नामक एक कंजूस था। वह गाँववालों को कर्ज देता और उनसे अन्यायपूर्वक बहुत ज़्यादा ब्याज वसूल करता। वह बड़ा क्रूर भी था। धन के सिवाय ज़िंदगी में उसे और कोई चीज़ महत्व की न थी। जो उसका कर्ज न चुकाता, उनके घर व जायदाद पर अधिकार कर लेता। उसने अपनी इकलौती बेटी का विवाह करके ससुराल भेज दिया, फिर कभी अपनी बेटी व दामाद को घर न बुलाया। अपनी पत्नी को भी खाना खिलाये बिना मार डाला। उसका बाप बीमार पड़ा तो दवा-दारू किये बिना ही उसे मरने दिया। रामना भी खुद न पेट भर खाता और न तन भर कपड़ा ही पहनता था। उसके पुराने मकान की कभी मरम्मत तक नहीं करवायी।

ऐसे परम नीच रामना से सारे गाँववाले द्वेष करते थे। लोग उससे उधार लेने से भी डरते थे, लेकिन ज़रूरत के लिए धन चाहने वाले ही उसकी देहली पर क़दम रखते थे।

बिना दवा-दारू के रामना का बाप मर गया। इस पर गाँववालों को उस पर बड़ा क्रोध आया और उसे अच्छा सबक़ सिखाना चाहा। सोमनाथ नामक एक होशियार युवक ने अपना निर्णय दोस्तों को सुनाया। सबने उस निर्णय को पसंद किया। उसने अपने मामा के यहाँ जादू की विद्याएँ सीख ली थीं।

"सोमनाथ, तुम ठीक कहते हो, रामना दिन व दिन मूर्ख बनता जा रहा है, लेकिन उसे सबक़ कैसे सिखाया जाय? उसके पास बहुत ज़्यादा धन है, धन रखनेवाला शक्तिशाली होता है न?" गाँव के मुखिये राघव ने कहा।

"काकाजी, मैंने एक योजना बनायी है। हमारा काम रामना का बाप भूत बनकर कर देंगे। रामना ने अपने पिता के जीवनकाल में उसकी परवाह नहीं की, पर भूत बने हुए अपने पिता के आदेशों की लापरवाह करने का वह साहस न कर सकेगा! वह डरपोक है। भय के मारे सब कुछ करेगा। उसको सुधारने के साथ हम उसके द्वारा गाँव का भला भी करेंगे।" सोमनाथ ने कहा।

"सो कैसे?" सब ने आश्चर्य के साथ पूछा।

सोमनाथ ने गुप्त रूप से अपनी योजना बाक़ी लोगों को बतायी। उन लोगों में यह विश्वास पैदा हो गया कि सोमनाथ की योजना सफल होगी और गाँव की पाठशाला के लिए एक नया भवन बनवाया जा सकता है।

रामना के पिता को गाँव के बाहर मुक्तापुर जाने के रास्ते में एक दलदल के पास दहन किया गया था। रामना अपना कर्ज वसूल करने मुक्तापुर गया और चांदनी रात में लौट रहा था। कर्ज वसूली के साथ ब्याज ज्यादा मिल गया था, इस खुशी में वह अपने गर्दभ स्वर में गीत गाते मैदान से होकर आ रहा था। दलदल के निकट पहुँचते ही उसे डर लगा, इसलिए वह और ज़ोर के साथ गाने लगा। उसके पिता को जहाँ जलाया गया था, वहाँ पर एक बड़ा बरगद का

पेड़ था। रामना ज्यों ही उस पेड़ के पास पहुँचा त्यों ही एक डाल टूटकर उसके आगे गिरी। रामना घबरा गया। उसने देखा कि बरगद की छाया में कोई सफ़ेद चीज़ हिलते दिखाई दी, फिर क्या था, वह डर के मारे थर थर कांपने लगा।

इतने में उसे भर्राई आवाज़ में कुछ शब्द सुनायी दिये :

"मैं तुम्हारा बाप हूँ, हे रामना!... तुम्हारा बाप मदन हूँ! मर गया, फिर भी मेरी आत्मा को शांति नहीं है। तुम पुत्र-धर्म का पालन करो! मेरी प्यास को बुझाओ! तुमने मेरा श्राद्ध ठीक से नहीं किया, इसलिए तुम फिर ठीक से श्राद्ध करो। गौतमभट्ट को बुलाओ। वे शास्त्र जानते हैं। उनकी सलाह लो, मुझे पानी दो! प्यास! प्यास से परेशान हूँ। मेरा गला सूखता जा रहा है। अपने बाप को...बचाओ।"

रामना ने हीन स्वर में जवाब दिया—"बहुत से रुपये खर्च होंगे। मैं तुम्हारे पीछे इतना धन खर्च नहीं कर सकता। नामुमकिन है!"

"नामुमकिन है? नहीं करोगे? यह तुम क्या कहते हो?" फिर सुनायी दिया। तभी उस पेड़ की डालों में भयंकर आवाज़ हुई। एक दूसरी डाल टूटकर नीचे गिर गयी।

"मेरी बात न मानोगे तो मैं तुम्हारा गला घोंट दूंगा। अरे मूर्ख, मैं यह भी
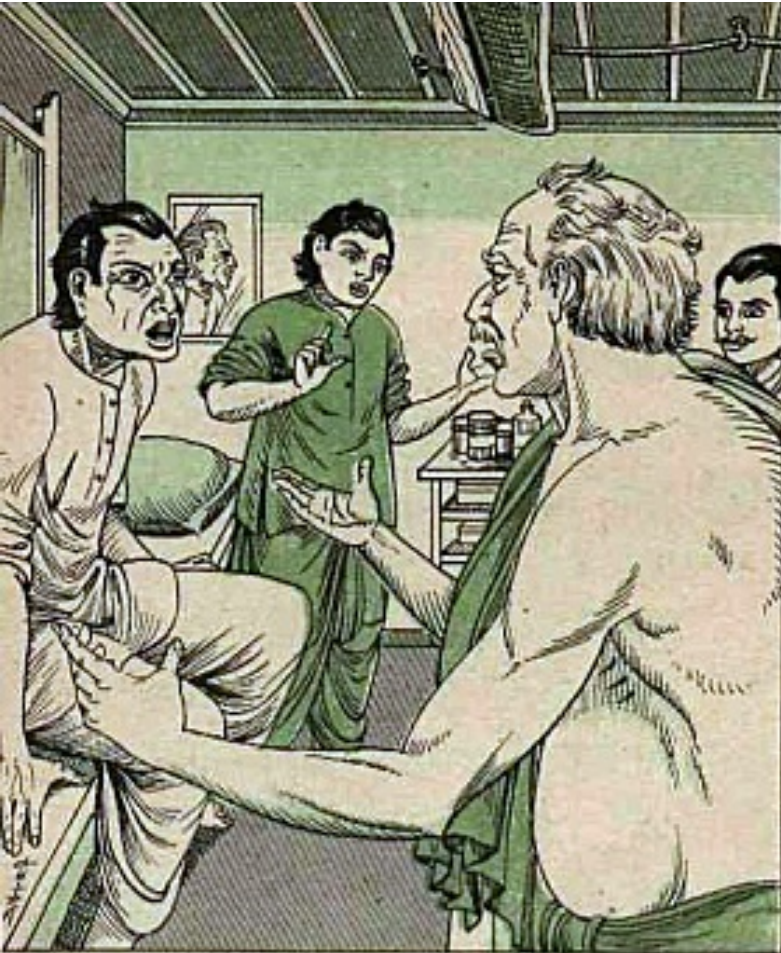
थी। सोमनाथ ने नालिका में से बात की। शुभजित डाल काटकर नीचे गिरा देता था। इस तरह उनका कार्यक्रम सफलतापूर्वक संपन्न हुआ, इसलिए वे तीनों खुश हुए। लेकिन उनका प्रमुख कार्यक्रम आगे था।

रामना को घर ले जानेवाले राघव वगैरह पहले उसे अश्वनी नामक एक वैद्य के घर ले गये। अश्वनी ने रामना की नाक में कोई रसनि छोड़ दिया। रामना ने ज़ोर से छींककर आँखें खोल दीं और डरी व सहमी दृष्टि से चारों तरफ़ देखते पूछा—"मैं कहाँ पर हूँ?"

"तुम्हें क्या हो गया? तुम दलदल की ओर से ज़ोर से चिल्ला उठे, वे चिल्लाहटें हमें गाँव तक सुनायी दीं। इसलिए हम दौड़े-दौड़े आये।" सोमनाथ ने जवाब दिया।

"मामा, ठहर क्यों गये? यह भी बताओ कि वहाँ पर जाते ही हमें क्या दिखायी दिया? क्या हमने इसके पिता को नहीं देखा?" राघव ने कहा।

"हाँ, हाँ, मदन काका तुम्हारे सिर के पास बैठे हाथ सहलाते हमें दिखायी दिया। हमने सोचा कि तुम मर गये हो। हम लोग लौटकर जा रहे थे, तब मदन काका ने उठ खड़े होकर कहा—"राघव,

न देखूंगा कि तुम मेरे बेटे हो।" भयंकर आवाज़ में वह कंठ बोला।

ये बातें सुन रामना डर के मारे बेहोश हो गया। उस वक़्त राघव वगैरह बाहर आये और रामना को ढोकर उसके घर ले गये। उनके जाते देख सोमनाथ तथा उसके मित्र देवाशीष और शुभजित ये दोनों पेड़ों से उतर आये। उन्हीं लोगों ने पेड़ पर छिपे रहकर यह सारा नाटक खेला। सोमनाथ के हाथ में एक चौड़े मुंहवाली नालिका थी। शुभजित के हाथ में एक आरा था। देवाशीष के हाथ एक बड़ी और सफ़ेद पतंग थी। पेड़ की छाया में इधर-उधर हिलनेवाली सफ़ेद वस्तु पतंग

सुनो। तुम सब लोग सुन लो। मेरे बेटों ने ठीक से मेरी देखभाल न की, मुझे मार डाला है। मरने पर भी मेरी आत्मा को शांति नहीं है। मैं प्यास के मारे परेशान हूँ। इस कमबख्त कंजूस को गाँव में पहुँचा दो। यह तो बेहोश हो गया है, लेकिन मरा नहीं, यह ज़िंदगी भर धन इकट्ठा करता रहा। एक भी अच्छे काम के लिए इसने धन खर्च नहीं किया। अड़ोस-पड़ोसवालों के प्रति इसने बड़ी क्रूरता का व्यवहार किया। अपनी पत्नी को ठीक से खाना नहीं खिलाया, मेरे साथ भी यही किया। अपनी बेटी के प्रति इसके दिल में दया नहीं है। इसी का किया हुआ पाप अब भी मेरा पीछा कर रहा है। शास्त्रविधि से मेरा श्राद्ध कर्म करने को कह दो। श्राद्ध के लिए गौतमभट्ट को ही बुला लाने को कहो। रामना अगर अपनी प्रवृत्ति को बदल लेगा तो मैं सबके देखते-देखते पानी पी लूंगा। ऐसा न किया तो मेरी प्यास न बुझेगी। मेरी आत्मा को कभी शांति न मिलेगी। तब मेरा क्रोध उसका नाश करेगा, इसे कोई रोक नहीं सकता।' यों बताया है। यों कहकर मदन काका पेड़ों की ओट में गायब हो गया है। तुमको हम लोग गाँव में उठा लाये हैं।" राघव ने कहा।
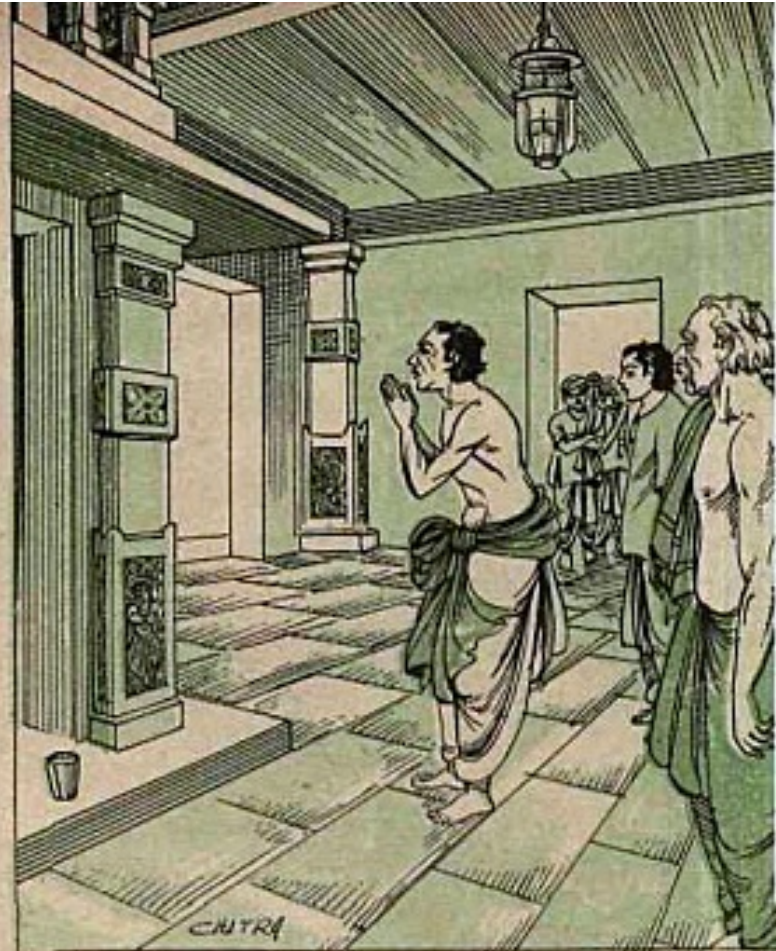
रामना थोड़ी देर तक सोचता रहा, तब गंभीर स्वर में बोला-"हम गौतमभट्ट के घर जाकर मेरे बाप के श्राद्ध के बारे में बात करेंगे। कल या परसों श्राद्ध कर्म करना होगा।"

सारे प्रबंध करके रामना ने अपने पिता का श्राद्ध ठाठ से मनाया। सारे गाँववालों को भोजन दिया गया। श्राद्ध के समाप्त होने पर रामना एक लोटे में पानी लाया, भगवान के सामने रखकर प्रार्थना की कि उसका पिता वह पानी पी ले। मगर लोटे में पानी वैसे ही रह गया। उसमें से एक बूंद भी कम न हुई। रामना डरकर निराश हो रोने लगा-

"मैं अब क्या करूँ? मैंने अपने पिता की तृप्ति के वास्ते बहुत-सा धन खर्च किया। सारा व्यर्थ हो गया; फिर भी वे मुझसे संतुष्ट नहीं हैं। पानी वैसा ही रह गया है। उनकी प्यास नहीं बुझी, वे पीते नहीं, मुझसे कौन भूल हो गयी है?"

इतने में बाहर कोई शोरगुल सुनायी दिया। शुभजित दौड़ते हुए भीतर आया और बोला–"सोमनाथ को कुछ हो गया है। वह बेहोश हो बाहर जमीन पर लोट रहा है।"

सोमनाथ को उठा ले आये। वह अपने हाथ-पैर मारते हीन स्वर में चिल्ला रहा था–"अरे रामना, मैं तुम्हारा पिता हूँ। मैं तुम्हारे कर्म से संतुष्ट हूँ, लेकिन तुमने अपने स्वभाव को नहीं बदला। इस श्राद्ध कर्म में तुमने अपनी बेटी, दामाद और अन्य रिश्तेदारों को क्यों नहीं बुलाया? एक और काम करो। गाँव की पाठशाला झोंपड़ी में लगती है। मेरे नाम पर पाठशाला के लिए एक अच्छी इमारत बनवा दो। ऐसा करोगे तो मेरी प्यास बुझेगी; वरना मेरी आत्मा को कभी शांति न मिलेगी।"

इतने में सोमनाथ ने अपने ओंठ को कंपाते दीर्घ सांस छोड़ दी। धीरे से आँखें खोलकर पूछा–"मैं कहाँ हूँ?"

"क्या मेरे पिताजी ने तुम से कुछ कहा कि वे कैसे अपनी प्यास बुझायेंगे?" रामना ने सोमनाथ से पूछा।

"हाँ, बताया है। मगर उन्होंने जो कुछ तुम से कहा, सो करो, वरना बुरा होगा। उन्होंने क्या क्या चाहा है, जानते हो?" सोमनाथ ने रामना से पूछा।

रामना ने तुरंत गाड़ी भेजकर अपनी बेटी और रिश्तेदारों को बुलवा भेजा। राघव से पूछने पर उसने बताया कि पाठशाला के भवन के लिए तीस हज़ार रुपयों की जरूरत है।

राघव ने कहा–"पाठशाला का नाम मदन स्मारक पाठशाला रखना होगा।"

इस प्रस्ताव को सभी गाँववालों ने मान लिया। तब मृत आत्मा के पानी पीकर प्यास बुझाने की घटना आयी।

सोमनाथ ने भगवान के मंदिर के सामने एक थाली में पानी डाल रखा था। वह बगल के कमरे में जाकर एक कांसे के लोटे के साथ लौट आया। सबके देखते पानीवाली थाली पर लोटे को औंधाकर रख दिया। तुरंत एक अद्‌भुत घटना हो गयी। थाली में रहनेवाला सारा पानी गायब हो गया। उसी वक़्त किसी के द्वारा उस पानी को खींचने की ध्वनि सुनायी दी।

इसके बाद सोमनाथ उस थाली को लोटे के साथ वैसे हीं पकड़कर बगल के कमरे में गया और भीतर से कुंडी चढ़ा ली। उसने लोटे को थाली पर से ऊपर उठाया तो लोटे में से पानी फिर थाली में गिर गया। लोटे में से थोड़ा-सा धुआं भी बाहर निकल आया। इसके बाद उसने लोटे के भीतर जो मोम की बत्ती छिपका दी थी, उसे निकालकर मोम के चिह्नों को साफ़ किया।

सोमनाथ ने यही किया था कि लोटे के भीतर निचले भाग में एक छोटी-सी मोमबत्ती छिपका दी, उसे जलाकर ले आया और पानीवाली थाली पर औंधे मुँह रख दिया। मोमबत्ती के जलते रहने के कारण लोटे के भीतर की हवा पतली बन गयी और उसकी भारवाहक शक्ति घट गयी। फिर लोटे को पानी पर औंधे मुँह रखते ही थाली का पानी बड़ी आवाज़ के साथ लोटे में चला गया। सोमनाथ जादू की विद्याओं में प्रवीण था, इसलिए उसने ऐसी कुशलता के साथ की, जिससे किसी को संदेह न हुआ। सबने इसे एक अद्‌भुत घटना समझी।

सोमनाथ की चाल पूरी तरह से चल निकली। इसलिए गाँववालों को बड़ा संतोष हुआ। उसके रहस्य को जाननेवालों ने इसे गुप्त रखा; लेकिन रामना में बहुत बड़ा परिवर्तन हुआ।

मनुष्य का मूल्य

द्वारका नगर में रामसुभग नामक एक धनी था। वह इस तरह व्यवहार करता था कि लोग समझे, वह एक बहुत बड़ा भक्त और धर्मात्मा है। मगर वह दान नहीं देता था।

एक दिन रामसुभग अपने हाथ-पैर व मुंह धोने के लिए मंदिर के पास तालाब में उतरा। सीढ़ियों पर पैर फ़िसलने के कारण तालाब में गिर गया। वह तैरना नहीं जानता था। लोग तो इकट्ठे हो गये, पर उसे बचाने की हिम्मत कोई नहीं कर पाया।

मण्डप के पास बैठे एक सन्यासी ने देखा और तुरंत तालाब में कूदकर रामसुभग को किनारे खींच लाया। रामसुभग जब होश में आया, तब उसने जान लिया कि सन्यासी ने ही उसके प्राण बचाये हैं। उसने तालाब के किनारे रखे अपने कुर्ते की जेब में से रुपयों की थैली निकाली और उसमें से एक चवन्नी निकालकर सन्यासी के हाथ दिया।

वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों को मालूम हुआ कि उस थैली में सोने की मुद्राएं और रुपये भी हैं, इसलिए वे सब क्रोध में आकर उसे फिर तालाब में गिराने को तैयार हो गये। मगर सन्यासी ने उनको रोकते हुए कहा–"आप लोग क्यों नाराज़ होते हैं? उसका जो मूल्य था, वही उसने मुझे दिया। बेचारे को छोड़ दीजिए।"

माया नगर

चीन देश में चार भाई थे। उन में से बड़े भाई का राजकुमारी के साथ, दूसरे का सेनापति की पुत्री से, तीसरे का मंत्री की पुत्री के साथ विवाह निश्चय हुआ। चौथे के मन में शादी करने का विचार तक न आया। शादी की बात उठाते ही वह यही जवाब देता–"अगर मैं शादी करूँगा तो किसी गंधर्व कन्या के साथ ही करूँगा।"

बड़े तीन भाइयों के विवाह राजमहल में एक साथ संपन्न हुए। उन विवाहों का ठाठ-बाट व वैभव देखने पर चौथे भाई ने सोचा कि वहाँ पर उसका कोई महत्व नहीं। वह राजमहल की भीड़ भाड़ व कोलाहल से अपने को बचाने के ख्याल से खेतों की ओर चल पड़ा।

चौथा भाई एक पुल के पास पहुँचा, वहाँ की छोटी-सी दीवारी पर झुककर नीचे बहनेवाले पानी की ओर ध्यान से देखा तो उसे समीप में ही एक अपूर्व सुंदरी दिखायी दी। उसने सोचा कि ऐसी सुंदर युवतियाँ स्वर्ग में भी न होंगी, इसलिए वह जरूर कोई देवता नारी होगी। हालांकि वह मोटे वस्त्र पहने हुए थी, फिर भी उसने बिना झिझक के पूछा–"क्या मेरे साथ विवाह करोगी?"

युवती ने अपनी स्वीकृति दी, इस पर चौथे भाई की खुशी का ठिकाना न रहा। उसे पालकी में ले जाना चाहा और उस युवती को वहीं पर ठहरने की सलाह दे चौथा भाई राजमहल को दौड़ गया। वहाँ पर चिल्लाने लगा–"मुझे तो पत्नी मिल गयी है।" मगर वहाँ के कोलाहल में किसी ने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। उसने किसी तरह चार कहारों

चीन की लोक कथा

तथा एक पालकी को प्राप्त किया। पुल के पास लौटकर उस युवती को पालकी में राजमहल तक ले आया। तब वहाँ के लोगों से कहा–"मेरे बड़े भाइयों के विवाहों के साथ मेरा भी विवाह कीजिए।" उसके साथ आयी हुई युवती के मोटे वस्त्र देख लोग हँस भी पड़े।

विवाह के दूसरे दिन दुलहिनों का अपने माता-पिता को देखने का रिवाज़ है। इसलिए बड़े भाइयों की तीनों पत्नियाँ राजमहल में गयीं। चौथे भाई की पत्नी के माँ-बाप का पता न था। इस लिए वह भी राजमहल में गयी। बड़े भाइयों की तीनों पत्नियों ने अपने माता-पिता को उपहार दिये। चौथे भाई की पत्नी को सबने हल्का समझा।

कुछ समय बाद नव वर्ष आया। बड़े भाई तीनों अपनी पत्नियों के साथ पुरस्कारों के बारे में परामर्श कर रहे थे, तब चौथा भाई चिंताकातर हो बैठा था। पत्नी के पूछने पर उसने जवाब दिया– "मैं गरीब हूँ, चिंता क्यों न करूँ! मैं कोई अपूर्व पुरस्कार नहीं दे सकूंगा।"

"तुम समुद्र के किनारे जाओ। वहाँ पर पानी में तैरतेवाली पेटी लेते आओ।" चौथे की पत्नी ने कहा।

चौथे भाई ने समुद्र के तट पर जाकर पानी पर तैरनेवाली पेटी को देखा। वह बहुत ही पुरानी पेटी थी। फिर भी वह उसे घर लाया।

चौथे भाई की पत्नी ने पेटी का ढक्कन खोला। चौथा भाई उसके भीतर झांककर आश्चर्य के साथ चिल्ला उठा। उस पेटी में उसे एक और दुनिया दिखायी दी। वहाँ पर एक महा नगर था। बड़े-बड़े राज पथ, महल, नाटकशालाएँ, विचित्र वस्तुओं से सजी दूकानें, विचित्र जानवर वगैरह थे। पति-पत्नी दोनों उस नगर के भीतर गये, सारा नगर घूमकर ऊपर आये, तब चौथे की पत्नी ने पेटी बंद की, इस नये अनुभव के द्वारा चौथा भाई विस्मय में आ गया।

इस के बाद उसने यह विचित्र दृश्य देखने के लिए अपने तीनों बड़े भाइयों और भाभियों को निमंत्रण दिया। सब उस पेटी में स्थित नगर में गये, मनोरंजन किया, भोजन करके शाम तक वहाँ पर आनंद के साथ अपना समय बिताया, सवेरा होते समय भी उन्हें पता न चला कि उसका समय कैसे कट गया।

यह सारा आनंद उठाने के बाद चौथे भाई की भाभियाँ उसकी पत्नी के प्रति ईर्ष्या से भर उठीं। उन लोगों ने जो कुछ देखा, अपने पिताओं को क्रोध और ईर्ष्यापूर्वक बताया। लेकिन तीनों भाई फिर एक बार उस नगर में जाने के लिए लालायित हो उठे। मगर राजा ने उन्हें रोका और उसने स्वयं उस नगर को देखने का निश्चय किया। उसे लगा कि ऐसा अद्‌भुत साधारण लोगों के पास नहीं रहना है, उसी का होना चाहिए।

"यह पेटी युद्ध के समय मेरे लिए उपयोगी होगी। लगता है कि उस माया नगर में रहनेवाले राजा के पास सेना है।" सेनापति ने अपने मन में सोचा।

"ऐसे नगर में अनेक धनी होंगे। राजा की ओर से मैं उन पर कर लगाऊँगा, कर वसूल करके उसमें से थोड़ा अंश में

अपने निजी व्यय के लिए रख लूँगा।" मंत्री ने सोचा।

वे तीनों उस पेटी के द्वारा कैसे लाभ उठाना है, यही सोचकर उसे देखने आये। तीनों ने अपनी-अपनी योजना बनायी। पर तीनों की योजाओं में से राजा की योजना स्पष्ट थी। राजा की योजना यह है कि राजा से बढ़कर जिसके पास वैभव हो, वे दण्ड पाने योग्य होते हैं। इसलिए वह चौथे भाई और उसकी पत्नी का सिर कटवा सकता है राजद्रोह के अपराध पर। सेनापति ने सोचा कि अपनी सेना को भेजकर चौथा भाई और उसकी पत्नी का वध करावे, मंत्री ने सोचा कि उन दोनों

पर कोई इलज़ाम लगाकर देश निकाला दण्ड उन्हें दिलाया जा सकता है।

जब राजा, सेनापति और मंत्री पेटी में स्थित नगर में प्रवेश करने लगे तब चौथा भाई भी उनके पीछे अपनी पत्नी के साथ गया। राजा सीधे राजमहल में गया, विचित्र बात तो यह थी कि उस नगर का कोई राजा न था। पर सेवक और सैनिक असंख्य थे। राजा ने दरबार में बैठकर शराब लाने का आदेश दिया, शराब आ गयी। राजा पीने लगा। बाक़ी लोग उसकी अनुमति के बिना ही न बैठ सकते थे और न शराब पी सकते थे। इसलिए वे सब खड़े ही रह गयें।

राजा ने शराब पीते हुए यों सोचा– "यह कायर सेनापति और विश्वास घातक मंत्री इस अद्भुत पेटी को हड़पने की योजना बनाते ही होंगे। उनकी योजनाएँ सफल हुईं, तो क्या वे मेरा सर्वनाश नहीं करेंगे?" इस विचार के आते ही राजा का क्रोध पल-पल बढ़ता गया। उसने अचानक सैनिकों के सरदार को बुला भेजा और पल भर में सेनापति और मंत्री का सिर कटवा डाला। अब उसके साथ चौथा भाई और उसकी पत्नी मात्र बच गये थे। राजा शराब पीते हुए उनकी ओर घूर घूरकर देखने लगा।

इतने में उस महल में पानी आने लगा। वह पानी चौथा भाई और उसकी पत्नी के एड़ियों तक आ पहुँचा। मगर राजा ने पानी की ओर शायद ध्यान नहीं दिया। चौथे भाई की पत्नी ने अपने पति का हाथ पकड़कर खींचा। वे दोनों तुरंत उस महल से बाहर आ गये। जब वे गलियों में पहुँचे तब तक घुटनों तक पानी आ गया। पेटी से बाहर आते-आते कमर तक पानी आ गया।

चौथे की पत्नी ने अपने पति से कहा– "यह पेटी भीग गयी है। इसे बाहर फेंक दो।"

इसके बाद किसी ने राजा को नहीं देखा। शायद माया नगर की बाढ़ में वह मर गया होगा।

सौदे का सार

एक गाँव में दो मित्र थे। उनमें से एक के पास अच्छी नस्ल का घोड़ा था। दोनों के मन में व्यापार करने का शौक था। एक दिन घोड़े के मालिक ने अपने मित्र से पूछा—"मेरे घोड़े का क्या दाम होगा?"

"सौ रुपये!" दूसरे ने जवाब दिया। घोड़े के मालिक ने सोचा कि उसका घोड़ा और ज्यादा मूल्य पर बिक सकता है, इसलिए उसने दूसरे से एक सौ पचास रुपयों में अपना घोड़ा फिर ख़रीद लिया। इसके बाद दूसरे ने पहले से उस घोड़े को दो सौ रुपयों में ख़रीदा।

इस तरह घोड़े का मूल्य बढ़ता गया, दोनों के हाथों में बदलते घोड़े का मूल्य बारह सौ रुपये तक बढ़ा। इतने में शहर से एक सौदागर आया और वह उस घोड़े को तेरह सौ रुपयों में ख़रीद कर ले गया।

घोड़े के ले जाने के बाद वे दोनों बहुत दुखी हुए। उस घोड़े के रहते दोनों का व्यापार बेरोकटोक चला। उसके जाते ही उनका व्यापार भी ठप्प पड़ गया।

पदकुशल
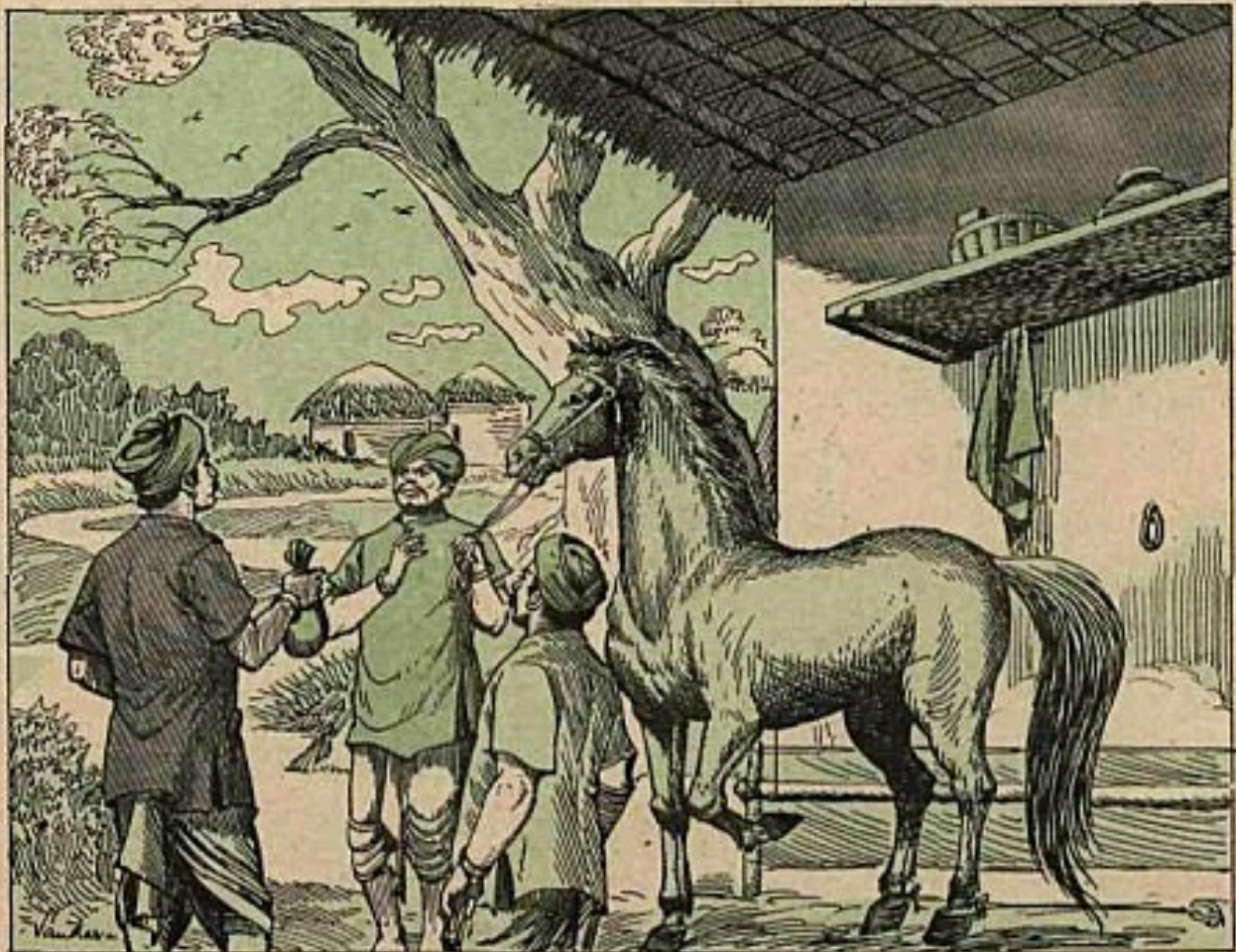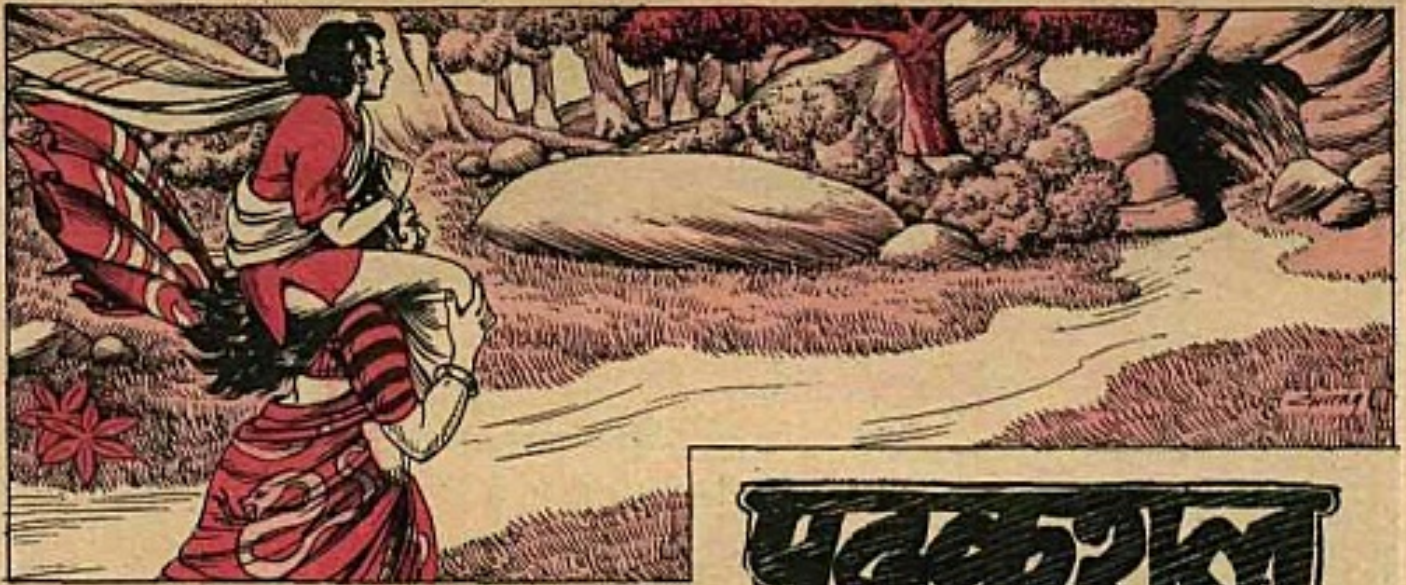
प्राचीनकाल में एक यक्षिणी ने कुबेर के यहाँ तीन वर्ष तक सेवा की और उसकी अनुमति से वन प्रदेश में थोड़ी दूर तक संपूर्ण अधिकार प्राप्त किया। एक गुफा में निवास करते अपनी सीमा के भीतर आनेवाले मनुष्यों को पकड़कर खाने लगी।

एक बार एक धनी तथा सुंदर ब्राह्मण अपने परिवार के साथ यात्रा करते उधर से आ निकला। उन्हें देखते ही यक्षिणी गरज उठी। ब्राह्मण के साथ चलनेवाले सभी लोग डरकर भाग गये। ब्राह्मण यक्षिणी के हाथों में पड़ गया। यक्षिणी ब्राह्मण को अपनी गुफा में ले आयी।

ब्राह्मण के स्पर्श से यक्षिणी के मन में उस पर मोह पैदा हुआ। इसलिए उसने ब्राह्मण को नहीं खाया, बल्कि अपने पति के रूप में रख लिया। यक्षिणी रोज मनुष्यों को पकड़कर लाती और उन्हें खा लेती। पर अपने पति को मनुष्यों के साथ ले जानेवाले चावल-दाल, तेल-कपड़े वगैरह चीजें देती। जब वह बाहर जाती तब गुफा पर एक भारी चट्टान मूंदकर चली जाती जिससे उसका पति भाग न जाय।

कुछ समय बाद यक्षिणी को ब्राह्मण के द्वारा एक लड़का पैदा हुआ। यक्षिणी अपने पति और पुत्र को भी बड़े प्रेम के साथ देखती थी। कुछ सालों में लड़का बड़ा हो गया। एक दिन यक्षिणी जब बाहर चली गयी, तब उसके पुत्र ने गुफा पर रखी चट्टान को हटाया और अपने पिता को बाहर ले गया। यक्षिणी ने लौटकर अपने पुत्र से पूछा—"किसने यह चट्टान हटायी है?"

"माँ; मैंने ही हटायी है, गुफा में अंधेरा था।" लड़के ने कहा। लड़के के प्रति

अधिक प्रेम होने के कारण यक्षिणी ने उसे कुछ नहीं कहा।

एक दिन पुत्र ने अपने पिता से पूछा– "पिताजी, आप में और माताजी में कोई साम्य नहीं है, ऐसा क्यों?"

"बेटा, तुम्हारी माँ मनुष्यों को मारकर खानेवाली यक्षिणी है और तुम और मैं– हम दोनों मनुष्य हैं।" पिता ने कहा।

"तब तो हम यहाँ पर क्यों रहे? जहाँ मनुष्य हों, वहीं जायेंगे।" पुत्र ने कहा।

"हम भाग जायेंगे तो तुम्हारी माँ हम दोनों को मार डालेगी।" पिता ने समझाया। अपने पिता को मनुष्यों के बीच ले जाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर पिता को समझाया कि वह डरे नहीं, तब अपने पिता को लेकर गुफा से भागने लगा।

वे दोनों यक्षिणी के हाथों में पड़ गये। तब यक्षिणी ने अपने पति से पूछा–"तुम भागते क्यों हो? यहाँ पर तुम्हें किस बात की कमी है?"

"मुझ पर नाराज़ मत होओ! तुम्हारा पुत्र ही मुझे अपने साथ ले गया।" ब्राह्मण ने समझाया। यक्षिणी अपने पुत्र को डाँट नहीं पायी; इसलिए दोनों को साथ ले अपनी गुफा में आ पहुँची।

यक्षिणी के पुत्र के मन में यह विचार आया कि अपनी माता के प्रदेश की सीमा

का पता लगाना है, उसे पार करके जाने पर वह उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकती। इस पर उसने अपनी माँ से पूछा–"माँ, तुम्हारी जायदाद का वारिस मैं ही तो हूँ! तुम्हारे अधिकार में जो प्रदेश है, उसकी सीमाएँ तो बतला दो।"

यक्षिणी ने कहा–"बेटा, यह तीन योजन चौड़ा और पाँच योजन लंबा प्रदेश तुम्हारा ही है।"

दो-तीन दिन बाद यक्षिणी के बाहर जाते ही उसका पुत्र अपने पिता को कंधों पर बिठाकर वायुवेग से दौड़ पड़ा। वह अपनी माता के द्वारा दिखायी गयी सीमा को पार कर एक नदी के पास पहुँचा।

उस समय तक यक्षिणी वहाँ पहुँची। उसने समझा कि उसके पति व पुत्र ने अपनी सीमा को पार कर लिया है। तब वह गिड़गिड़ाते बोली-"बेटा, तुम अपने पिता को साथ लेकर लौट आओ, मैंने तुम लोगों को किस बात की कमी होने दी?"

इस बीच ब्राह्मण नदी पार करके उस पार पहुँच गया। तब पुत्र ने यक्षिणी से कहा-"माँ, मैं और मेरे पिता हम दोनों मानव हैं, तुम यक्षिणी हो! तुम्हारे पास हम कितने दिन रह सकते हैं?"

इस पर यक्षिणी ने अपने पुत्र से पूछा-"बेटा, क्या तुम अब लौटकर नहीं आओगे? जो शिक्षा नहीं जानता, उसका मनुष्यों के बीच जीना मुश्किल है। तुम्हें मैं चिंतामणि नामक विद्या प्रदान करती हूँ। उसके प्रभाव से तुम्हें बारह वर्ष पुराने पैरों के चिह्न भी दिखायी देंगे। इस विद्या के बल पर जीओ!"

पुत्र ने नदी के तट पर रहकर ही अपनी माता को प्रणाम किया और वह मंत्र सीख लिया। पुत्र-वात्सल्य से प्रेरित हो रोते हुए ही यक्षिणी ने अपने पुत्र को मंत्र सिखलाया। मंत्र को सीख कर पुत्र ने अपनी माता को प्रणाम किया और कहा-"माँ, अब तुम जाओ।"

"बेटा, तुम लौट न आओगे तो मेरे प्राण उड़ जायेंगे!" यों कहते यक्षिणी ने वहीं पर अपने प्राण त्याग दिये।

पुत्र अपनी माता की मृत्यु पर बड़ा दुःखी हुआ। फूलों से उसकी पूजा की। चिता बनाकर दहन-संस्कार किया, तब अपने पिता को साथ लेकर वाराणसी पहुँचा। वहाँ के राजा के पास खबर भेज दी-"महाराज, आप के राज्य में पदकुशल आया हुआ है।" राजा ने उसे दरबार में बुला भेजा। उसने राजा को प्रणाम किया। तब राजा ने उससे पूछा-"तुम कौन कौन विद्याएँ जानते हो?"

"महाराज, मैं बारह वर्ष पूर्व के पद-चिह्नों को देखकर भी खोई हुई वस्तुओं को ला सकता हूँ।" पदकुशल ने कहा।

राजा ने उसे रोज़ एक हज़ार मुद्राओं के वेतन पर दरबार में नियुक्त किया ।

एक दिन राजपुरोहित ने राजा से कहा–"महाराज, यह पदकुशल वेतन तो पाता है पर इसने कभी अपनी विद्या का प्रदर्शन नहीं किया ।"

राजा ने पदकुशल की परीक्षा लेनी चाही । अपने हीरे व जवाहरातों की रक्षा करनेवाले दो भटों को बुलाकर उन्हें कुछ समझाया । वे रत्न लेकर राजमहल से उतरे । राजमहल के चारों तरफ़ तीन बार परिक्रमा की, तब सीढ़ी से चहार दीवारी पर चढ़े, वहाँ से बाहर उतर पड़े, वहाँ थोड़ी देर तक एक मण्डप में बैठे रहे, पुन: सीढ़ी की मदद से चहार दीवारी पर चढ़ आये, भीतर उतरे, एक तालाब के पास पहुँचकर तीन बार उसकी परिक्रमा की, रत्नों को उस तालाब में छिपाकर फिर महल पर चढ़ आये ।

दूसरे दिन यह अफ़वाह फैल गयी कि हीरे खो गये हैं । राजा ने पद कुशल को बुलाकर कहा–"राजमहल में रत्नों की चोरी हो गयी है । चोरी का पता लगाकर बतला दो ।"

"महाराज, मैं बारह वर्ष पूर्व चोरी गयी वस्तुओं का पता लगाकर ला सकता हूँ, कल जिनकी चोरी गयी है, उनका पता लगाना कौन बड़ी बात है?" पदकुशल ने जवाब दिया । इसके बाद पदकुशल ने अपनी माता का स्मरण किया, मंत्र का

जाप करके कहा–"महाराज, मुझे दो चोरों के पद-चिह्न दिखाई दे रहे हैं।"

पदकुशल राजा के पद-चिह्न तथा राजपुरोहित के पद-चिह्नों का पता लगाते रत्नों के स्थान पर पहुँचा। वहाँ से उसने राजमहल की तीन बार परिक्रमा की, फिर चहार दीवारी के पास पहुँचकर बोला–"महाराज, पद-चिह्न आकाश में दिखाई दे रहे हैं। सीढ़ी मँगवा दीजिए।" इसके बाद वह सीढ़ी पर चढ़कर दीवारी के बाहर उतरा, मण्डप के पास जाकर फिर चहार दीवारी के पास लौटा, चहार दीवारी से उतरकर तालाब के पास आया। तीन बार उसकी परिक्रमा की, तब बोला–"महाराज, चोर इस तालाब में उतरे हैं।" यों कहते वह भी तालाब में उतरा, रत्न ऊपर लाकर बोला–"महाराज, चोर बड़े ही प्रवीण हैं। इस मार्ग से राजमहल पर चढ़ गये हैं।"

तब राजा ने सोचा कि यह व्यक्ति चोरी गयी वस्तुओं को ला सकता है, मगर चोरों को पकड़ नहीं पाता है। यह सोच कर पदकुशल से कहा–"तुमने वस्तुओं का तो पता लगाया, क्या चोरों का भी पता लगा सकते हो?"

"चोर यहीं पर हैं, महाराज! चोरी गयी वस्तुओं के मिल जाने के बाद चोरों से क्या मतलब है?" पदकुशल ने कहा।

"अगर तुम चोरों के नाम बता नहीं सकोगे तो यही समझना होगा कि तुमने ही चोरी की है!" राजा ने कहा।

"तब तो मैं कल दरबार में बताऊँगा कि चोर कौन हैं?" पदकुशल ने कहा।

दूसरे दिन दरबार में राजा ने पदकुशल से पूछा–"अब बताओ, चोर कौन हैं?"

"आप और आप के पुरोहित हैं, महाराजा।" पदकुशल ने जवाब दिया।

दरबारी लोग ये बातें सुन चकित रह गये। मगर राजा ने पदकुशल की विद्या पर प्रसन्न होकर दरबारियों को बताया कि उसने कैसे पदकुशल की परीक्षा ली है?

दूसरे दिन के युद्ध में, दुपहर तक कौरव योद्धा अश्वत्थामा, कृप और शल्य ने पांडव वीर धृष्टद्युम्न तथा अभिमन्यु के साथ युद्ध किया। इसके बाद दुर्योधन का पुत्र लक्ष्मण और अभिमन्यु के बीच भयंकर द्वन्द्व युद्ध हुआ। इसमें लक्ष्मण को पराजित होते देख दुर्योधन तथा अनेक अन्य कौरव योद्धाओं ने अभिमन्यु को घेर लिया। अभिमन्यु निर्भयता के साथ सब से संग्राम कर रहा था, तभी उसकी मदद के लिए अर्जुन आ पहुँचा। इसे देख भीष्म, द्रोण वगैरह महारथी कौरवों के पक्ष में आ गये। उस समय अर्जुन का सामना करना किसीसे संभव न हुआ। उसने प्रलय काल के रुद्र की भांति कौरव सेनाओं को भस्म किया। कौरव सैनिकों में से कई लोग मर गये और बाक़ी लोग भाग खड़े हुए।

उस समय भीष्म ने द्रोण से कहा– "अर्जुन का इस प्रकार युद्ध करते वक़्त उसके सामने कोई भी ठहर नहीं सकता। भागनेवाली हमारी सेना को वापस लौटाना संभव नहीं है। अलावा इसके सूर्य का अस्त होने जा रहा है। लगता है कि आज के लिए युद्ध समाप्त करना हमारे लिए ज्यादा अच्छा है।"

तीसरे दिन सवेरे कौरव सेनाएँ गरुड व्यूह में तथा पांडव सेनाएँ अर्द्धचंद्र के व्यूह में कुरुक्षेत्र के मैदान में युद्ध के लिए सन्नद्ध हो गयीं। युद्ध के प्रारंभ होते ही दुर्योधन ने अपनी रथ सेना को साथ ले

घटोत्कच का सामना किया। पांडव योद्धा भीष्म और द्रोण से जूझ पड़े। अभिमन्यु तथा सात्यकी ने शकुनि का सामना किया। अर्जुन रथ-योद्धाओं का बुरी तरह से वध करने लगा। इसी प्रकार भीष्म और द्रोण पांडवों की सेना का निर्मूल करने लगे। मगर भीम और घटोत्कच मिल कर कौरव सेना को भगाने लगे। उस सेना को लौटाना भीष्म और द्रोण के द्वारा संभव न हुआ। यह काम अकेले दुर्योधन कर सका। दुर्योधन की सेनाओं को लौटते देख भागनेवाली अन्य सेनाएँ लज्जा से भर उठीं और वे भी युद्ध करने लौट आयीं।

ऐसी हालत में दुर्योधन ने भीष्म के पास आकर तीक्ष्ण शब्दों में कहा– "दादाजी, आपके युद्ध क्षेत्र में रहते हमारी सेनाओं का तित्तर-बित्तर हो जाना आपके लिए कैसे अपमान की बात है? यदि आप पांडवों के प्रति ऐसी दया और सहानुभूति की भावना रखते हैं तो युद्ध के पूर्व ही कह सकते थे कि मैं पांडवों, सात्यकी तथा धृष्टद्युम्न के साथ युद्ध न करूँगा। आप सब अपने पराक्रम के अनुरूप युद्ध न करेंगे तो मेरा क्या होगा? मैं तो आप लोगों के पराक्रम पर निर्भर होकर ही महाभारत युद्ध के लिए तैयार हो गया था, यह बात आप न भूलिए।"

भीष्म क्रोध की स्थिति में भी हँसते बोला–"मैंने तुम्हें कितनी बार बताया कि पांडवों को हराना इंद्र और देवताओं के लिए भी मुमकिन नहीं है। मैं वृद्ध हूँ, फिर भी अपनी शक्ति-भर लड़ रहा हूँ। मैं कैसे लड़ता हूँ, तुम और तुम्हारे समर्थक सब देख लो।"

युद्ध में पांडवों का हाथ ऊँचा देख भीष्म क्रोध में आकर अत्यंत भीभत्सता के साथ युद्ध करने लगा। दुर्योधन की सारी सेना उसके साथ ही थी। उस दिन भीष्म के सामने आकर कोई भी योद्धा घायल हुए

बिना वापस नहीं लौटा । पांडवों की सेना हज़ारों टुकड़ों में बिखर गयी । कृष्ण और अर्जुन देखते ही रह गये, पर भीष्म को रोक नहीं पाये ।

भड़के गये जानवरों की भांति भागने वाले सैनिकों को देख कृष्ण ने अर्जुन से कहा–"अर्जुन, अब तुम अपना प्रताप दिखाओ । तुमने मुझे वचन दिया था कि तुम्हारे सामने कोई भी कौरव आएगा, उन सबको मार डालोगे । भीष्म को देख सारे योद्धा इस तरह भड़क कर भाग रहे हैं, मानो अपने सामने साक्षात् मृत्यु को देख लिया हो ।"

"हे कृष्ण, रथ को भीष्म के सामने ले जाइये । उस वृद्ध का अंतिम निर्णय कर लूंगा ।" अर्जुन ने कहा, कृष्ण ने वैसा ही किया ।

भीष्म के दीखते ही अर्जुन ने उनके हाथ के धनुष को अपने बाण से तोड़ दिया । इस पर भीष्म ने अर्जुन की प्रशंसा करते एक और धनुष को अपने हाथ में लिया और युद्ध के लिए ललकारा । दोनों के बीच तीव्रता के साथ युद्ध होने लगा, पर कृष्ण को लगा कि अर्जुन उत्साह के साथ युद्ध नहीं कर रहा है । इसलिए कृष्ण ने अपने मन में सोचा–"अर्जुन, अगर भीष्म के प्रति ऐसा आदर दिखाता है तो युधिष्ठिर की सेना के नाश होने में ज़्यादा समय नहीं लगता । मुझे ही कवच धारण कर भीष्म का वध करके पांडवों का कार्य संपन्न करना होगा ।"

कृष्ण से भीष्म ने शांत स्वर में कहा–"आओ कृष्ण, तुम्हारे हाथों में मरने से मुझे यश और आदर भी प्राप्त होंगे।"

तब कृष्ण ने भीष्म के पास आकर समझाया–"जनता के क्षय का कारण तुम्हीं हो! धोखा देकर जुआ खेलते समय तुम दुर्योधन को रोक नहीं पाये, लेकिन अब उसकी रक्षा करने निकले हो! वह वंश द्रोही अगर तुम्हारी बात न मानता तो उसे तुमने क्यों त्याग नहीं दिया?"

"राजा तो परम देवता होता है।" भीष्म ने उत्तर दिया।

"क्या यादवों ने कंस को छोड़ नहीं दिया? जिसकी बुद्धि उल्टे सोचती है, उसका विनाश निश्चित है।" कृष्ण ने समझाया।
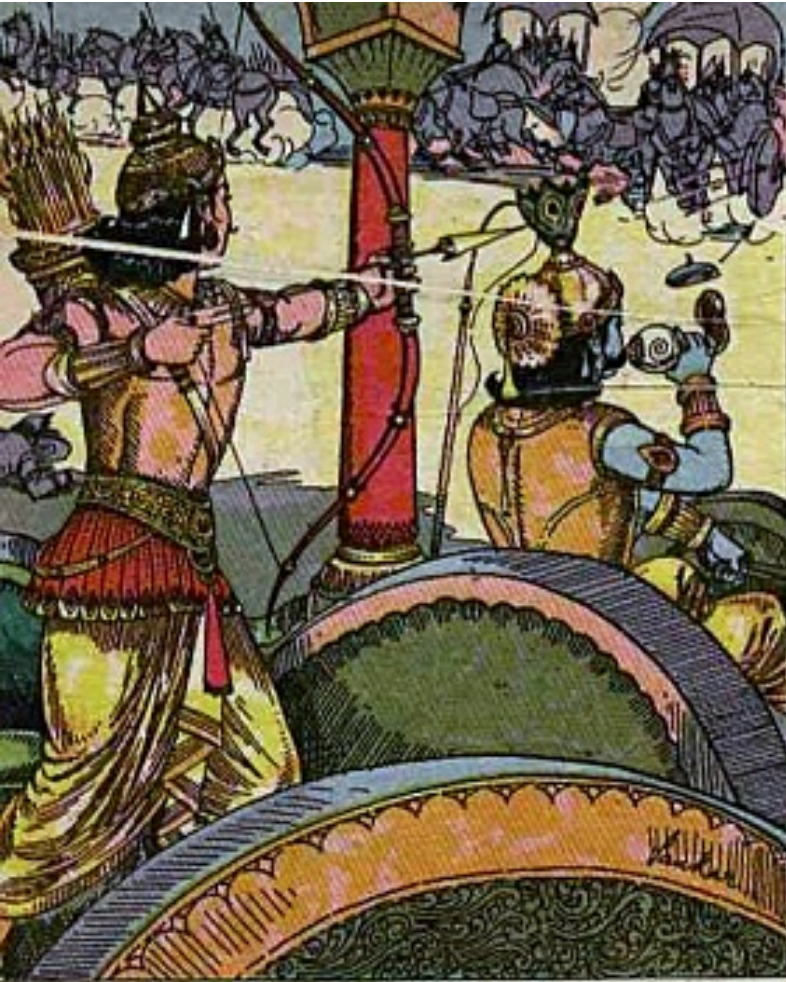
इस बीच सैकड़ों कौरव वीरों ने आकर अर्जुन को घेर लिया। उस हालत में सात्यकी अर्जुन की मदद के लिए आया। उसने भागनेवालों को ठहर जाने की चेतावनी दी। तब कृष्ण ने सात्यकी से कहा–"सात्यकी, जो भाग रहे हैं, उन्हें भाग जाने दो। बाक़ी लोगों को भी भागने दो। मैं आज इन भीष्म, द्रोण और बाक़ी कौरव योद्धाओं का अपने चक्रायुध से वध करके युधिष्ठिर का पट्टाभिषेक करूँगा।"

यों कहकर कृष्ण ने अपने चक्रायुध को कंधे पर रखा। घोड़ों की रासों को छोड़ जमीन पर कूद पड़ा। चक्रायुध लेकर अपने ऊपर हमला करने आनेवाले

इतने में अर्जुन अपने रथ से उतर आया और कृष्ण को कसकर पकड़ लिया। वह कृष्ण से निवेदन कहते बोला–"कृष्ण, शांत हो जाइये। आपके सिवा पांडवों के रक्षक ही कौन हैं? मैंने जो प्रतिज्ञा की, उसका अवश्य पालन करूँगा। मैं अपने रिश्तेदारों व मित्रों को गवाह बना कर यह शपथ खाता हूँ कि मैं सारे कौरवों का वध करूँगा।"

ये बातें सुन कृष्ण संतुष्ट हुआ, वह लौट आकर रथ पर बैठ गया। उसने

रस्से हाथ में ले शंख-ध्वनि की। तुरंत अर्जुन ने भयंकर युद्ध प्रारंभ किया। उसके साथ भीष्म, भूरिश्रव, शकुनि इत्यादि कौरव-योद्धा युद्ध करने लगे। अर्जुन के बाणों ने रथों, हाथियों तथा घोड़ों को छेद दिया। कौरव योद्धा बुरी तरह से घायल हो गये।

शीघ्र ही विराट, द्रुपद इत्यादि अर्जुन की मदद के लिए आ पहुँचे। सारा युद्ध-क्षेत्र लाशों से पट गया। ख़ून की नदियाँ बह उठीं। पांडवों ने विजय-घोष किये। अर्जुन ने ऐंद्रास्त्र का प्रयोग किया जिससे भीष्म, द्रोण, दुर्योधन आदि वापस मुड़े और कौरव सेनाएँ तितर-बितर हो गयीं। उस दिन अर्जुन ने अपना अद्‌भुत पराक्रम दिखाकर कौरव योद्धाओं का बड़ा अपयश किया। युधिष्ठिर युद्ध समाप्त कर अपने शिविर को लौट चला।

चौथे दिन प्रातःकाल कौरव सेनाओं का महा सेनापति भीष्म अत्यंत क्रोध के साथ युद्ध के लिए तैयार हो गया। उसके पीछे द्रोण, दुर्योधन, बाह्लिक वगैरह वीर चल पड़े। उस दिन पांडव सेना के आगे अर्जुन खड़ा हो गया।

युद्ध के प्रारंभ होते ही भीष्म और अर्जुन ने एक दूसरे का सामना किया। द्रोण, कृप, शल्य, विविंशती, दुर्योधन तथा

कुछ अन्य योद्धा भी अर्जुन पर टूट पड़े। उन सब का सामना अभिमन्यु ने किया। अर्जुन और अभिमन्यु की सहायता के लिए धृष्टद्युम्न आ पहुँचा। इसके बाद जो युद्ध हुआ, उसमें सांयम नामक योद्धा के पुत्र को धृष्टद्युम्न ने मार डाला।

उस वक़्त शल्य ने धृष्टद्युम्न पर हमला किया। दोनों ने दो घड़ी तक घोर युद्ध किया। इतने में अभिमन्यु ने शल्य पर वार किया। शल्य की रक्षा के लिए दुर्योधन, दुश्शासन, दुर्मर्षण, दुस्सह, दुर्मुख, चित्रसेन आदि ने अभिमन्यु को घेर लिया। तब भीम, धृष्टद्युम्न, उप पांडव, नकुल, सहदेव, अभिमन्यु इत्यादि दस लोगों न

मागध को भी बाणों का प्रहार करके मार डाला। इसके बाद भीम के वारों से घबराकर कई हाथी वापस मुड़कर कौरव सेना को रौंधते भाग गये। तब भीम का वध करने आये हुए कौरव वीरों तथा भीम की रक्षा करनेवाले पांडव वीरों के बीच घनघोर युद्ध हुआ। वह युद्ध देखते ही बनता था!

पांडव वीरों में सब से अधिक पौरुष दिखाकर युद्ध में कौरवों को सतानेवाला व्यक्ति सात्यकी है। उसका सामना करने से हर कोई डर रहा था, ऐसी हालत में भूरिश्रव ने उसके साथ टक्कर लिया। मगर सात्यकी ने उसे भी सता-सता कर भगा दिया।

उस वक़्त दोनों दलों के योद्धाओं के बीच जो युद्ध हुआ, उसमें भीम ने प्रमुख स्थान लेकर लड़ते हुए धृतराष्ट्र के पुत्रों, सुषेण, जलसंध, वीरबाहु, भीमरथ और सुलोचन को क्रमशः मार डाला। इस भीभत्स को देख धृतराष्ट्र के बाक़ी पुत्र भाग गये।

भीष्म ने इस दृश्य को देख भीम को घेरने के लिए अपने महारथियों को आदेश दिया। उनमें भगदत्त, जो नरकासुर का पुत्र था, एक मत्त हाथी पर सवार हो भीम पर हमला करने आया। तब अभिमन्यु

दुर्योधन आदि दस लोगों के साथ युद्ध किया।

उस युद्ध में भीम गदा लेकर शल्य पर टूट पड़ा। इसे देख दुर्योधन ने गजसेना को आगे रखकर भीम का सामना किया। भीम गर्जन करते गदा के साथ रथ पर से कूद पड़ा और अंधाधुंध हाथियों का वध करने लगा। बाक़ी नौ पांडओं ने पीछे से आकर उसकी रक्षा की। उस युद्ध में अनेक हाथी और गज योद्धा भी मौत को प्राप्त हुए। वह सेना मागध की थी, इसलिए मागध ने ऐरावत जैसे हाथी पर सवार हो उसे अभिमन्यु के रथ की ओर उकसाया। अभिमन्यु ने उस हाथी तथा

वगैरह ने भगदत्त और उसके हाथी पर वाणों की वर्षा की। भगदत्त ने अपने घायल हाथी को पाँडवों पर उकसाया, भीम पर एक बाण का प्रयोग करके उसे बेहोश करके सिंहनाद कर उठा।

इस घटना को देख घटोत्कच क्रोध में आया। वह एक और मत्त हाथी पर सवार हो भगदत्त से जूझ पड़ा। उनका युद्ध अत्यंत भयंकर था। कौरवों ने सोचा कि उस युद्ध में महारथी व सेनापति भगदत्त मारा जाएगा, तब उसकी मदद के लिए द्रोण, दुर्योधन वगैरह आ पहुँचे। तुरंत घटोत्कच की सहायता के लिए पांडव योद्धा आये।

घटोत्कच के भीषण युद्ध को देख भीष्म को ईर्ष्या हुई। उसने द्रोण से कहा–"यह घटोत्कच अपना असाधारण पौरुष दिखा रहा है, उसकी सहायता के लिए भी काफ़ी योद्धा तैयार खड़े हैं। हम लोग थके हुए हैं, इसलिए आज का युद्ध समाप्त करेंगे।"

यह बात सब को पसंद आयी, सब लोग युक्ति के साथ घटोत्कच के सामने से हट गये और युद्ध क्षेत्र से जाने लगे। तब पाँडवों ने शंख बजाकर सिंहनाद किया, और भीम तथा घटोत्कच की प्रशंसा करते अपने शिविरों को लौट गये। सब के चले जाने के बाद दुर्योधन अपने भाइयों की मृत्यु पर शोक में डूब गया, तब शिविर के कृत्यों में निमग्न हो गया।

ये सारे समाचार संजय के मुँह से सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा–"संजय, पाँडवों की याद करने से मुझे डर लगता है। मैं नहीं कह सकता कि क्या होनेवाला है? शायद विदुर के कहे अनुसार हो जाय! बताओ, किसी भी उपाय से पांडव मरे और मेरे पुत्र जीवित रहे, ऐसा मार्ग बता दो। मैं पांडवों की विजय और अपने पुत्रों की हार सुनना नहीं चाहता। पांडवों ने कोई वर प्राप्त कर लिया है। भगवान बड़ी क्रूरता के साथ मुझे दण्ड दे रहा है।"

मित्र-भेद

[४]

दंतिल की कहानी

संजीवक को दमनक ने दंतिल की कहानी यों बतायी : वर्द्धमान नगर में दंतिल नामक एक मशहूर व्यापारी था। वह नगर पालक के पद पर रहते नगर से संबंधित सारे कार्य देखा करता था। वह राजा के निजी खर्च का भी हिसाब देखता था। कहा जाता है कि राजा के स्नेह पात्र व्यक्ति से प्रजा द्वेष करती है और प्रजा के हितैषी व स्नेहपात्र व्यक्ति के साथ राजा द्वेष करता है। राजा और प्रजा के हित और श्रेय में वैरुध्य होने के कारण दोनों को संतुष्ट करना अत्यंत कठिन है। लेकिन दंतिल दोनों के लिए भी प्रिय पात्र व्यक्ति था।

एक बार दंतिल ने अपनी पुत्री का विवाह किया। उस विवाह में दंतिल ने नगर के नागरिकों और राज-कर्मचारियों को निमंत्रण दिया, सबको दावत दे क़ीमती वस्त्र देकर भेजा। विवाह के समाप्त होने पर दंतिल ने राजा और रानी को इसलिए निमंत्रण दिया कि वे दोनों आकर वधू को आशीर्वाद दे। वे दोनों दंतिल के घर आने को तैयार हो गये। उनसे पहले दरबार से कई अधिकारी व कर्मचारी दंतिल के घर आये। उनमें राजमहल में झाड़ू देनेवाला गोरभ नामक नौकर भी था। गोरभ राज-पुरोहित के लिए सुरक्षित आसन पर जा बैठा। समझाने पर भी

अंतिम पृष्ठ का चित्र

दंतिल इस प्रकार सोचते खड़ा ही था कि गोरभ ने द्वारपालों से कहा–"जैसे इन्होंने मुझे अपने घर से निकलवा दिया था, ऐसे ही इन्हें भी निकाल दो।"

ये बातें सुन दंतिल ने सोचा कि गोरभ ही इस घटना का कारण भूत है। उस रात को दंतिल ने गोरभ को अपने घर बुला भेजा और उसे अच्छे वस्त्र देकर कहा–"भाई, मैंने घमण्ड में आकर तुम्हारा अपमान नहीं किया। तुम राज पुरोहित के आसन पर बैठे, उतरने से इनकार करके तुमने जान-बूझकर अपमान मोल लिया है।"

गोरभ अच्छे वस्त्र पाकर बड़ा खुश हुआ और बोला–"वह अपमान तो तभी जाता रहा, अब आप देखेंगे कि आप पर राजा का कैसे अनुग्रह प्राप्त होगा!" यों कहकर गोरभ चला गया।

दूसरे दिन सवेरे राजा नींद से जाग उठा, जागकर भी बिस्तर पर लेटा रहा, तब गोरभ कमरा साफ़ करने आया और गुनगुनाने लगा–"राजा में थोड़ा भी शिष्टाचार नहीं है। टट्टी में जाकर ककड़ी खाते हैं।"

राजा ने ये बातें सुन गोरभ को निकट बुलाया और पूछा–"अरे, तुम झूठ क्यों बोलते हो? दूसरा होता तो मैं अब तक उसे मार डालता। क्या तुमने देखा है कि मैं टट्टी जाकर ककड़ी खाता रहा?"

"महाराज, रात को बड़ी देर तक पांसे खेलता रहा। निद्रालुता में मैंने क्या बक दिया, मुझे ही नहीं मालूम। कृपया क्षमा कीजिए।" गोरभ ने कहा।

राजा को मालूम हो गया कि गोरभ की बातों में कोई तथ्य नहीं है। उसने सोचा–"मैंने दंतिल के साथ बड़ा अन्याय किया है। वह बुजुर्ग है। अलावा इसके एक दिन दंतिल को दरबार और कचहरी में आने से रोकने पर दरबार और नगर के सारे काम अस्त-व्यस्त हो गये हैं।" इसलिए राजा ने दंतिल को बुला भेजा और उसे अच्छे-अच्छे वस्त्र तथा उपहार देकर फिर उसी पद पर नियुक्त किया।

१४२. पपैरस

सबसे पहले मिश्र वासियों ने कागज़ तैयार करने के लिए पपैरस नामक जल पौधे की डंटलों का उपयोग किया। यह ६००० वर्ष पुरानी बात है। हम इस वक़्त जो कागज़ इस्तेमाल करते हैं, वह लगभग एक हज़ार वर्ष पहले काम में लाया गया है। मगर उसका 'पेपर' नाम 'पपैरस' से ही आया है। सिसिली में पपैरस नामक पौधे को दो सौ वर्षों से उगा कर उससे कागज़ तैयार कर रहे हैं। निम्नलिखित चित्र में दीखनेवाला पपैरस सैरावयूस (सिसिली) के समीप में स्थित एक नदी में पैदा होता है। पपैरस की डंटल में पानी के नीचे रहनेवाले अंश के साथ ही कागज़ तैयार किया जाता है।

Photo by D. N. Shirke

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

घुमाऊँ प्रभु को चारों धाम

प्रेषक :
जी. पी. नायुडु

Photo by D. N. Shirke

द्वारा जी. एल. नायुडु,
बिलासपुर (म. प्र.)

मेरे तो बस एक राम!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ नवम्बर ५ तक प्राप्त होनी चाहिए।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जनवरी के अंक में प्रकाशित की जायेंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा मुखपृष्ठ:
चक्र चलते वर्ष में एक बार

तीसरा मुखपृष्ठ:
हाथी न भी हिलते एक बार

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by: K. S. PALANI

मित्र-भेद